Ñfr % fo'kn Jh lIr_f'k fo/kku

Ñfrdkj % i-iw- lkfgR; jRukdj] {kekewfrZ
vkpk;Z Jh 108 fo'kn lkxj th egkjkt

laLdj.k % izFke&2014* izfr;k¡ %1000

ladyu % eqfu Jh 108 fo'kky lkxj th egkjkt

lg;ksxh % {kqYyd Jh 105 folkse lkxj th egkjkt

laiknu % cz- T;ksfr nhnh ¼9829076085½ cz- vkLFkk nhnh] cz- liuk nhnh

la;kstu % cz- lksuw nhnh] cz- fdj.k nhnh] cz- vkjrh nhnh] cz- mek nhnh

lEidZ lw=k % 9829127533] 9953877155

izkfIr LFky % 1- tSu ljkoj lfefr] fuezyday pkj xks/kk] 2142] fueZy fudqat] jsfM;ks ekdsZV eful gkjksa dk jkLrk] t;iqj Qksu %0141&2319907 ¼?kj½ eks- %9414812008

2- Jh jkts'k dqekj tSu Bsdsnkj ,&107] cqèk fogkj] vyoj] eks- %9414016566

3- fo'kn lkfgR; dsUnz Jh fnxEcj tSu eafnj dqvk¡ okyk tSuiqjh jsokM+h ¼gfj;k.kk½] 9812502062] 09416888879

4- fo'kn lkfgR; dsUnz] gjh'k tSu t; vfjgUr VªsMlZ] 6561 usg: xyh fu;j ykyc¡Rkh pkSd] xka/khuxj] fnYyh eks- 09818115971] 09136248971

ewY; % 25@& #- ek=k

µ%vFkZ lkStU; %µ
Jh vuwi tSu lqiq=k Jh /keZiky th tSu
C/o vyksd ,UVjizkbZtst] ukjuksy
Qksu % 09315510772

eqnzd% ikjl izdk'ku] fnYyh Qksu ua- %09811374961] 09818394651
E-mail : pkjainparas@gmail.com, parasparkashan@yahoo.com

lIrf'kZ ozr ¼e`R;qat; ozr½

आज से लगभग 9 लाख वर्ष पूर्व श्री रामचन्द्र के समय मथुरानगरी के उद्यान में सात महर्षि महामुनि पधारे थे। वहाँ वर्षायोग स्थापित किया था, उनके शरीर से स्पर्शित हवा के प्रभाव से वहाँ पर दैवी प्रकोप-महामारी रोग कष्ट दूर हुआ था। तभी से लेकर आज तक इन सप्तर्षि मुनियों की प्रतिमाएँ मंदिरों में विराजमान कराने की परम्परा चली आ रही है और इनकी अभिषेक-भक्ती आदि पूजा की जाती है।

इस व्रत की विधि–आषाढ़ शु. चतुर्दशी से श्रावण कृष्णा पंचमी तक सात दिन यह व्रत करना चाहिए। इन व्रतों के दिन सप्तर्षि मुनियों की प्रतिमा का पंचामृत अभिषेक करके उन्हीं की पूजा करें। उद्यापन पर परम पूज्य आचार्य श्री 108 विशद सागर जी महाराज द्वारा रचित यह सप्त ऋषि मण्डल विधान करना चाहिए। मंत्र निम्न प्रकार हैं–

समुच्चय मंत्र–ॐ ह्रीं अर्हं सुरमन्यु-श्रीमन्यु-श्रीनिचय-सर्वसुन्दर-जयवान-विनयलालस-जयमित्रनाम सप्त महर्षिभ्यो नमः।

1. ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसुरमन्युमहर्षये नमः।
2. ॐ ह्रीं अर्हं श्रीश्रीमन्युमहर्षये नमः।
3. ॐ ह्रीं अर्हं श्रीनिचयमहर्षये नमः।
4. ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसर्वसुंदरमहर्षये नमः।
5. ॐ ह्रीं अर्हं श्रीजयवानमहर्षये नमः।
6. ॐ ह्रीं अर्हं श्रीविनयलालसमहर्षये नमः।
7. ॐ ह्रीं अर्हं श्रीजयमित्रमहर्षये नमः।

इन सप्तर्षियों की कथा पढ़ें। सात वर्ष तक यह व्रत करके उद्यापन में सप्तर्षियों की मूर्तियों प्रतिष्ठित कराकर मंदिरों में, गृह चैत्यालयों में विराजमान करें। यशाशक्ति मुनि-आर्यिका आदि को आहारदान आदि देकर दीन-दुखियों को भी करुणादान, औषधिदान आदि देवें।

इस व्रत को लगातार सात वर्ष करना चाहिए। इस व्रत के प्रभाव से अकालमृत्यु को दूर कर परम्परा से मृत्युंजयपद मोक्षपद भी प्राप्त किया जा सकता है। जीवन में आनेवाले अनेक संकट दूर होंगे। अनेक

प्रकार के एक्सीडेंट, रोग शोक, संकट दूर होंगे। इसमें कोई भी संदेह नहीं है।

दोहा– ऋद्धिधर ऋषिराज है, महिमामयी महान।
विशद भाव से कर रहे, ऋषियों का गुणवान॥

सप्तर्षियों की कथा–अयोध्या के राजदरबार में एक दिन महाराजा श्री रामचन्द्र ने अपने भाई शत्रुघ्न से कहा–

''शत्रुघ्न! इस तीन खण्ड की वसुधा में तुम्हें जो देश इष्ट हो, उसे स्वीकृत कर लो। क्या तुम अयोध्या का आधा भाग लेना चाहते हो? या उत्तम पोदनपुर को? राजगृह नगर चाहते हो या मनोहर पौंड्र नगर को?''

इत्यादि प्रकार से भी राम और लक्ष्मण ने सैकड़ों राजधानियाँ बताईं, तब शत्रुघ्न ने बहुत कुछ विचार कर मथुरा नगरी की याचना की। तब श्री राम ने कहा–

''मथुरा का राजा मधु है, वह हम लोगों का शत्रु है, यह बात क्या तुम्हें ज्ञात नहीं है? वह मधु रावण का जमाई है और चमरेन्द्र ने उसे ऐसा शूलरत्न दिया हुआ है जो कि देवों के द्वारा भी दुर्निवार है, वह हजारों के भी प्राण हरकर पुनः उसके हाथ में आ जाता है। इस मधु का लवणार्णव नाम का पुत्र है वह विद्याधरों के द्वारा भी दुःसाध्य है, उस शूरवीर का तुम किस तरह जीत सकोगे?''

बहुत कुछ समझाने के बाद भी शत्रुघ्न ने यही कहा कि–

''इस विषय में अधिक कहने से क्या लाभ? आप तो मुझे मथुरा दे दीजिए। यदि मैं उस मधु को मधु के छत्ते के समान तोड़कर नहीं फेंक दूँ तो मैं राजा दशरथ के पुत्र होने का ही गर्व छोड़ दूँ। हे भाई! आपके आशीर्वाद से मैं उसे दीर्घ निद्रा में सुला दूँगा।

इसके बाद शत्रुघ्न ने जिनमंदिर में जाकर सिद्ध परमेष्ठियों की पूजा करके घर जाकर भोजन किया पुनः माता के पास पहुँचकर प्रणाम करके मथुरा की ओर प्रस्थान के लिए आज्ञा माँगी। माता सुप्रभा ने पुत्र के मस्तक पर हाथ फेरकर उसे अपने अर्धासन पर बिठाकर प्यार से कहा–

''हे पुत्र! तू शत्रुओं को जीतकर अपना मनोरथ सिद्ध कर! हे वीर!

तुझे युद्ध में शत्रु को पीठ नहीं दिखाना है। हे वत्स! जब तू युद्ध में विजयी होकर आएगा, तब मैं सुवर्ण के कमलों से जिनेन्द्रदेव की परम पूजा करूँगी।''

बहुत बड़ी सेना के साथ शत्रुघ्न ने क्रम-क्रम से पुण्यभागा नदी को पार करे आगे पहुँचकर अपनी सेना ठहरा दी और गुप्तचरों को मथुरा भेज दिया। उन लोगों ने आकर समाचार दिया–

''देव! सुनिए, यहाँ से उत्तर दिशा में मथुरा नगरी है वहाँ नगर के बाहर एक सुन्दर राजउद्यान है। इस समय राजा मधुसुन्दर अपनी जयंत रानी के साथ वहीं निवास कर रहा है। कामदेव के वशीभूत हुए और सब काम को छोड़कर रहते हुए आज छठा दिन है। आपके आगमन का उसे अभी तक कोई पता नहीं है।''

गुप्तचरों के द्वारा सर्व समाचार विदित कर शत्रुघ्न ने यही अवसर अनुकूल समझकर साथ में एक लाख घुड़सवारों को लेकर वह मथुरा की ओर बढ़ गया। अर्धरात्रि के बाद शत्रुघ्न ने मथुरा के द्वारा में प्रवेश किया। इधर शत्रुघ्न के बंदीगणों ने–

''राजा दशरथ के पुत्र शत्रुघ्न की जय हो।'' ऐसी जयध्वनि से आकाश को गुंजायमान कर दिया था। तब मथुरा के अन्दर किसी शत्रुराजा का प्रवेश हो गया है, ऐसा जानकर शूरवीर योद्धा जग पड़े। इधर शत्रुघ्न ने मधु के राजमहल में प्रवेश किया और मधु की आयुधशाला पर अपना अधिकार जमा लिया।

शत्रुघ्न को मथुरा में प्रविष्ट जानकर महाबलवान् राजा मधुसुन्दर रावण के समान क्रोध को करता हुआ उद्यान से बाहर निकला किन्तु शत्रुघ्न से सुरक्षित मथुरा के अन्दर व अपने महल में प्रवेश करने में असमर्थ ही रहा, तब वह अपने शूलरत्न को प्राप्त नहीं कर सका फिर भी उसने शत्रुघ्न से सन्धि नहीं की प्रत्युत् युद्ध के लिए तैयार हो गया।

वहाँ दोनों की सेनाओं में घमासान युद्ध हो गया। इधर मधुसुन्दर के पुत्र लवणार्णव के साथ कृतांतवक्त्र के द्वारा शक्ति नामक शस्त्र के प्रहार से वह लवणार्वण मृत्यु को प्राप्त हो गया। पुनः राजा मधु और शत्रुघ्न का बहुत देर तक युद्ध चलता रहा। बाद में मधु ने अपने

को शूलरत्न से रहित जानकर तथा पुत्र के महाशोक से अत्यंत पीड़ित होता हुआ शत्रु की दुर्जेय स्थिति समझकर मन में चिंतन करने लगा–

''अहो! मैंने दुर्दैव से पहले अपने हित का मार्ग नहीं सोचा, यह राज्य, यह जीवन पानी के बुलबुले के समान क्षणभंगुर है। मैं मोह के द्वारा ठगा गया हूँ। पुनर्जन्म अवश्य होगा, ऐसा जानकर भी मुझ पापी ने समय रहते हुए कुछ नहीं सोचा। अहो! जब मैं स्वाधीन था, तब मुझे सद्बुद्धि क्यों नहीं उत्पन्न हुई? अब मैं शत्रु के सन्मुख क्या कर सकता हूँ? अरे! जब भवन में आग लग जावे, तब कुंआ खुदवाने से भला क्या होगा...?''

ऐसा चिंतवन करते हुए राजा मधु एकदम संसार, शरीर और भोगों से विरक्त हो गया। तत्क्षण ही उसने अर्हंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और साधु इन पाँचों परमेष्ठियों को नमस्कार करके चारों मंगल, लोकोत्तम और शरणभूत की शरण लेता हुआ अपने दुष्कृतों की आलोचना करके सर्व सावद्य योग–सर्व आरंभ-परिग्रह का भावों से ही त्याग करके यथार्थ समाधिमरण करने में उद्यमशील हो गया। उसने सोचा–

''अहो! ज्ञान-दर्शनस्वरूप एक आत्मा ही मेरा है, वही मुझे शरण है। न तृण सांथरा है न भूमि, बल्कि अंतरंग-बहिरंग परिग्रह को मन में छोड़ देना ही मेरा संस्तर है।...।''

ऐसा विचार करते हुए उस घायल स्थिति में ही शरीर से निर्मम होते हुए राजा मधुसुन्दर ने हाथी पर बैठे-बैठे ही केशलोंच करना शुरू कर दिया।

युद्ध की इस भीषण स्थिति में भी अपने हाथों से अपने सिर के बालों का लोच करते हुए देखकर शत्रुघ्न कुमार ने आगे आकर उन्हें नमस्कार किया और बोले–

''हे साधो! मुझे क्षमा कीजिए....। आप धन्य हैं कि जो इस रणभूमि में भी सर्वारंभ-परिग्रह का त्याग कर जैनेश्वरी दीक्षा लेने के सन्मुख हुए हैं।''

उस समय जो देवांगनाएँ आकाश में स्थित हो युद्ध देख रही थीं उन्होंने महामना मधु के ऊपर पुष्पों की वर्षा की। इधर राजा मधु ने परिणामों की विशुद्धि से समता भाव धारण करते हुए प्राण छोड़े और

समाधिमरण-वीरमरण के प्रभाव से तत्क्षण ही सानत्कुमार नाम के तीसरे स्वर्ग में उत्तम देव हो गये।

इधर वीर शत्रुघ्न भी संतुष्ट हुआ और युद्ध को विराम देकर सभी प्रजा को अभयदान देते हुए मथुरा में आकर रहने लगा।

मथुरानगरी में महामारी प्रकोप, सप्तर्षि के चातुर्मास से कष्ट निवारण–राजा मधुसुन्दर का वह दिव्य शूलरत्न यद्यपि अमोघ था, फिर भी शत्रुघ्न के पास वह निष्फल हो गया, उसका तेज छूट गया और वह अपनी विधि से च्युत हो गया। तब वह (उसका अधिष्ठाता देव) खेद, शोक और लज्जा को धारण करता हुआ अपने स्वामी असुरों के अधिपति चमरेन्द्र के पास गया। शूलरत्न के द्वारा मधु के मरण का समाचार सुनकर चमरेन्द्र को बहुत ही दुःख हुआ। वह बार-बार मधु के सौहार्द का स्मरण करने लगा। तदनंतर वह पाताल लोक से निकलकर मथुरा जाने को उद्यत हुआ। तभी गरुड़कुमार देवों के स्वामी वेणुधारी इन्द्र ने इसे रोकने का प्रयास किया किन्तु यह नहीं माना और मथुरा में पहुँच गया।

वहाँ चरमेन्द्र ने देखा कि मथुरा की प्रजा शत्रुघ्न के आदेश से बहुत बड़ा उत्सव मना रही है, तब वह विचार करने लगा–

''ये मथुरा के लोग कितने कृतघ्नी हैं कि जो दुःख शोक के अवसर पर भी हर्ष मना रहे हैं। जिसने हमारे स्नेही राजा मधु को मारा है, मैं उसके निवासस्वरूप इस समस्त देश को नष्ट कर दूँगा।''

इत्यादि प्रकार के क्रोध से प्रेरित हो उस चमरेन्द्र ने मथुरा के लोगों पर दुःसह उपसर्ग करना प्रारंभ कर दिया। जो जिस स्थान पर सोये थे, बैठे थे, वे महारोग (महामारी) के प्रकोप से दीर्घ निद्रा को प्राप्त हो गये–मरने लगे।

इस महामारी उपसर्ग को देखकर कुल देवता की प्रेरणा से राजा शत्रुघ्न अपनी सेना के साथ अयोध्या वापस आ गए।

विजय को प्राप्त कर आते हुए शूरवीर शत्रुघ्न का श्रीराम-लक्ष्मण ने हर्षित हो अभिनंदन किया। माता सुप्रभा ने भी अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार सुवर्ण के कमलों से जिनेन्द्रदेव की महती पूजा सम्पन्न करके धर्मात्माओं को दान दिया पुनः दीन-दुःखी जनों को करुणादान देकर

सुखी किया। यद्यपि वह अयोध्या नगरी सुवर्ण के महलों से सहित थी फिर भी पूर्वभवों के संस्कारवश शत्रुघ्न का मन मथुरा में ही लगा हुआ था।

इधर मथुरा नगरी के उद्यान में गगननामी ऋद्धिधारी सात दिगम्बर महामुनियों ने वर्षायोग धारण कर लिया–चातुर्मास स्थापित कर लिया। इनके नाम थे–सुरमन्यु, श्रीमन्यु, श्रीनिचय, सर्वसुन्दर, जयवान, विनयलालस और जयमित्र।

प्रभापुर नगर के राजा श्रीनंदन की धारिणी रानी के ये सातों पुत्र थे। प्रीतिंकर मुनिराज को केवलज्ञान प्राप्त हो जाने पर देवों को जाते हुए देखकर प्रतिबोध को प्राप्त हुए थे। उस समय राजा श्रीनंदन ने अपने एक माह के पुत्र को राज्य देकर अपने सातों पुत्रों के साथ प्रीतिंकर भगवान के समीप दीक्षा ग्रहण कर ली थी। समय पाकर श्रीनंदन ने केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्ष प्राप्त कर लिया था और ये सातों मुनि तपस्या के प्रभाव से अनेक ऋद्धियों को प्राप्त कर सातऋषि (सप्तर्षि) के नाम से प्रसिद्ध हो रहे थे।

उद्यान में वटवृक्ष के नीचे ये सातों मुनि चातुर्मास में स्थित हो गए थे। इन मुनियों के तपश्चरण के प्रभाव से उस समय मथुरा में चमरेन्द्र के द्वारा फैलायी गयी महामारी एकदम नष्ट हो गई थी। वहाँ नगरी में चारों तरफ के वृक्ष फलों के भार से लद गये थे और खेती भी खूब अच्छी हो रही थी। ये मुनिराज रस-परित्याग, बेला, तेला आदि तपश्चरण करते हुए महातप कर रहे थे। कभी-कभी ये आहार के समय आकाश को लांघकर निमिषमात्र में विजयपुर, पोदनपुर आदि दूर-दूर नगरों में जाकर आहार ग्रहण करते थे। वे महामुनिराज परगृह में अपने करपात्र में केवल शरीर की स्थिति के लिए आहार लेते थे।

एक दिन ये सातों ही महाऋषि राज जूड़ाप्रमाण (चार हाथ प्रमाण) भूमि को देखते हुए अयोध्या नगरी में प्रविष्ट हुए। वे विधिपूर्वक भ्रमण करते हुए अर्हद्दत्त सेठ के घर के दरवाजे पर पहुँचे। उन मुनियों को देखकर अर्हद्दत्त सेठ विचार करने लगा–

''यह वर्षाकाल कहाँ? और इन मुनियों की यह चर्या कहाँ? इस नगरी के आस-पास पर्वत की कंदराओं में, नदी के तट पर, वृक्ष

के नीचे, शून्य घर में, जिनमंदिर में तथा अन्य स्थानों में जहाँ कहीं जो भी मुनिराज स्थित हैं, वे सब वर्षायोग पूरा किये बिना इधर-उधर नहीं जाते हैं परन्तु ये मुनि आगम के विपरीत चर्या वाले हैं, ज्ञान से रहित और आचार्यों से रहित हैं। इसलिए ये इस समय यहाँ आ गये हैं। यद्यपि ये मुनि असमय में आये थे फिर भी अर्हद्दत्त के अभिप्राय को समझने वाली वधू ने उनका पड़गाहन करके उन्हें आहारदान दिया।

आहार के बाद ये सातों मुनि तीन लोक को आनंदित करने वाले ऐसे जिनमंदिर में पहुँचे, जहाँ भगवान मुनिसुव्रतनाथ की प्रतिमा विराजमान थी और शुद्ध निर्दोष प्रवृत्ति करने वाले दिगम्बर साधुगण भी विराजमान थे।

ये सातों मुनिराज पृथ्वी से चार अंगुल ऊपर चल रहे थे। ऐसे इन मुनियों को वहाँ पर स्थित द्युति भट्टारक-द्युति नाम के आचार्य देव ने देखा। इन मुनियों ने उत्तम श्रद्धा से पैदल चलकर ही जिनमंदिर में प्रवेश किया, तब द्युति भट्टारक ने खड़े होकर नमस्कार कर विधि से उनकी पूजा की।

''यह हमारे आचार्य चाहे जिसकी वंदना करने के लिए उद्यत हो जाते हैं।''

ऐसा सोचकर उन द्युति आचार्य के शिष्यों ने उन सप्तर्षियों की निंदा का विचार किया। तदनंतर सम्यक् प्रकार से स्तुति करने में तत्पर वे सप्तर्षि मुनिराज जिनेन्द्र भगवान की वंदना कर आकाशमार्ग से पुनः अपने स्थान पर चले गये। जब वे आकाश में उड़े, तब उन्हें चरण ऋद्धि के धारक जानकर द्युति आचार्य के शिष्य जो अन्य मुनि थे, उन्होंने अपनी निंदा-गर्हा आदि करके प्रायश्चित कर अपनी कलुषता दूर कर अपना हृदय निर्मल कर लिया।

इसी बीच में अर्हद्दत्त सेठ जिनमंदिर में आया, तब द्युति आचार्य ने कहा–

''हे भद्र! आज तुमने ऋद्धिधारी महान मुनियों के दर्शन किये होंगे। वे सर्वजगवंदित महातपस्वी मुनि मथुरा में निवास करते हैं, आज मैंने उनके साथ वार्तालाप किया है। उन आकाशगामी ऋषियों के दर्शन से आज तुमने भी अपना जीवन धन्य किया होगा।''

इन आचार्यदेव के मुख से उन साधुओं की प्रशंसा सुनते ही सेठ अर्हद्दत्त खेदखिन्न होकर पश्चाताप करने लगा–

''ओह! यथार्थ को नहीं समझने वाले मुझ मिथ्यादृष्टि को धिक्कार हो, मेरा आचरण अनुचित था, मेरे समान दूसरा अधार्मिक भला और कौन होगा? इस समय मुझसे बढ़कर दूसरा मिथ्यादृष्टि अन्य कौन होगा? हाय! मैंने उठकर मुनियों की पूजा नहीं की तथा नवधाभक्ती से उन्हें आहार भी नहीं दिया।

साधुरूपं समालोक्य न मुंचत्यासनं तु याः।
दृष्ट्वाऽपमन्यते यश्व स मिथ्यादृष्टिरुच्यते।।

दिगम्बर मुनियों को देखकर जो अपना आसन नहीं छोड़ता है–उठकर खड़ा नहीं होता है तथा देखकर भी उनका अपमान करता है, वह मिथ्यादृष्टि कहलाता है।

मैं पापी हूँ, पाप कर्मा हूँ, पापात्मा हूँ, पाप का पात्र हूँ अथवा जिनागम की श्रद्धा से दूर निंद्यतम हूँ। जब तक मैं हाथ जोड़कर उन मुनियों की वंदना नहीं कर लूँगा, तब तक मेरा शरीर एवं हृदय झुलसता ही रहेगा। अहंकार से उत्पन्न हुए इस पाप का प्रायश्चित उन मुनियों की वंदना के सिवाय और कुछ भी नहीं हो सकता है।''

(इस कथा से यह स्पष्ट हो जाता है कि आकाशगामी मुनि चातुर्मास में भी अन्यत्र जाकर आहार ग्रहण करके आ जाते थे।)

शत्रुघ्न के लिए महामुनि का उपदेश–इधर इस मथुरा नगरी में इन मुनियों के चातुर्मास करने से चमरेन्द्र द्वारा किये गये सारे उपद्रव-महामारी आदि नष्ट हो गये थे। नगर में पुनः पूर्ण शांति का वातावरण हो गया था।

इधर अयोध्या से अर्हदत्त सेठ महान वैभव के साथ कार्तिक शुक्ला सप्तमी के दिन उन ऋषियों की वंदना करने के लिए पहुँच गए थे। राजा शत्रुघ्न भी इन मुनियों का उपदेश श्रवणकर भक्ती से प्रेरित हुए मथुरा के उद्यान में आ गए थे और उनकी माता सुप्रभा भी विशाल वैभव और धन आदि को लेकर इन मुनियों की पूजा करने के लिए आ गई। उन सम्यग्दृष्टि महापुरुषों ने और सुप्रभा आदि रानियों ने मुनिराज की महान पूजा की। उस समय वहाँ वह उद्यान और मुनियों के आश्रम

का स्थान प्याऊ, नाटकशाला, संगीतशाला आदि से सुशोभित हुआ स्वर्गप्रदेश के समान मनोहर हो गया था।

अनन्तर भक्ती एवं हर्ष से भरे हुए शत्रुघ्न ने वर्षायोग को समाप्त करने वाले उन मुनियों को पुनः पुनः नमस्कार करके उनसे आहार ग्रहण करने के लिए प्रार्थना की, तब इन सातों में जो प्रमुख थे, वे 'सुरमन्यु' महामुनि बोले–

''हे नरश्रेष्ठ! जो आहार मुनियों के लिए संकल्प कर बनाया जाता है, दिगम्बर मुनिराज उसे ग्रहण नहीं करते हैं। जो आहार न स्वयं किया गया है न कराया गया और जिसमें न बनाते हुए को अनुमति दी गई है ऐसे नवकोटि विशुद्ध आहार को ही साधुगण ग्रहण करते हैं।''

पुनः शत्रुघ्न ने निवेदन किया–

''हे भगवन्! आप भक्तों के ऊपर अनुग्रह करने वाले हैं। आप अभी कुछ दिन और यहीं मथुरा में ठहरिये। आपके प्रभाव से ही यहाँ महामारी की शांति हुई है...।''

पुनः शत्रुघ्न चिंता करने लगा–

''ऐसे महामुनियों का विधिवत् आहार दान देकर मैं कब संतुष्ट होऊँगा!'' शत्रुघ्न को नतमस्तक देखकर उन मुनिराज ने पुनः आगे आने वाले काल का वर्णन करते हुए उपदेश दिया–

''हे राजन्! जब अनुक्रम से तीर्थंकरों का काल व्यतीत हो जाएगा–पंचम काल आ जाएगा, तब यहाँ धर्म कर्म से रहित अत्यन्त भयंकर समय आ जाएगा। दुष्ट पाखंडी लोगों द्वारा यह परम पावन जैन शासन उस तरह तिरोहित हो जाएगा कि जिस तरह धूलि के छोटे-छोटे कणों द्वारा सूर्य का बिम्ब ढक जाता है। यह संसार चोरों के समान कुकर्मी, क्रूर, दुष्ट, पाखण्डी लोगों से व्याप्त होगा। पुत्र, माता-पिता के प्रति और माता-पिता पुत्रों के प्रति स्नेह रहित होंगे। उस कलिकाल में राजा लोग चोरों के समान धन के अपहर्ता होंगे। कितने ही मनुष्य यद्यपि सुखी होंगे, फिर भी उनके मन में पाप होगा, वे दुर्गति में ले जाने वाली ऐसी विकथाओं से एक-दूसरे को मोहित करते हुए प्रवृत्ति करेंगे।

हे शत्रुघ्न! कषायबहुल समय के आने पर देवागमन आदि समस्त अतिशय नष्ट हो जायेंगे। तीव्र मिथ्यात्व से युक्त मनुष्य व्रतरूप गुणों

से सहित एवं दिगम्बर मुद्रा के धारक मुनियों को देखकर ग्लानि करेंगे। अप्रशस्त को प्रशस्त मानते हुए कितने ही दुर्बुद्धि लोग भय पक्ष में उस तरह जा पड़ेंगे जिस तरह कि पतंगे अग्नि में जा पड़ते हैं। कितने ही मूढ़ मनुष्य हंसी करते हुए शान्तचित मुनियों को तिरस्कृत करके मूढ मनुष्यों को आहार देवेंगे। जिस प्रकार शिलातल पर रखा हुआ बीज यद्यपि सदा सींचा जाय तो भी उसमें फल नहीं लग सकता है, वैसे ही शील रहित मनुष्यों के लिए दिया हुआ दान भी निरर्थक होता है। 'जो गृहस्थ मुनियों की अवज्ञा कर गृहस्थ के लिए आहार देते हैं, वे मूर्ख चंदन को छोड़कर बहेड़ा ग्रहण करते हैं।

अवज्ञाय मुनीन् गेही गेहिने यः प्रयच्छति।
त्यक्त्वा स चंदनं मूढो गृह्णत्येव विभीतकं॥67॥

हे शत्रुघ्न! इस प्रकार दुषमता के कारण निकृष्ट काल को आने वाला जानकर तुम आत्मा के लिए हितकर शुभ और स्थायी ऐसा कार्य करो। तुम नामी पुरुष हो अतः निर्ग्रन्थ मुनियों को आहार देने का निश्चय करो, यही तुम्हारी धन-संपदा का सार है। हे राजन्! आगे आने वाले काल में थके हुए मुनियों के लिए आहार देना अपने गृहदान के समान एक बड़ा भारी आश्रय होगा। इसलिए हे वत्स! तुम ये दान देकर इस समय गृहस्थ के शीलव्रत का नियम धारण करो और जीवन को सार्थक बनाओ। मथुरा के समस्त लोग समीचीन धर्म को धारण करें। दया और वात्सल्य भाव से सम्पन्न तथा जिनशासन की भावना से युक्त होंवे। घर-घर में जिन प्रतिमाएँ स्थापित की जावें, उनकी पूजाएँ हों, अभिषेक हों और विधिपूर्वक प्रजा का पालन किया जाये।

सप्तर्षि प्रतिमा दिक्षु चतसृष्वपि यत्नतः।
नगयां कुरू शत्रुघ्न! तेन शांतिर्भविष्यति॥74॥
अद्यप्रभृति यद्गेहे जैनं बिंबं न विद्यते।
मारी भक्ष्यति यद्व्याघ्री यथाऽनाथं कुरंगकं॥75॥

(पद्मपुराण, पर्व 92)

हे शत्रुघ्न! इस नगरी की चारों दिशाओं में सप्तर्षियों की प्रतिमाएँ स्थापित करो, उसी से सब प्रकार की शांति होगी। आज से लेकर जिस घर में जिनप्रतिमा नहीं होगी, उस घर को मारी उसी तरह खा

जायेगी की जिस तरह व्याघ्री अनाथ मृग को खा जाती है। जिसके घर में अंगूठा प्रमाण भी जिनप्रतिमा होगी, उसके घर में गरुड़ से डरी हुई सर्पिणी के समान मारी का प्रवेश नहीं होगा।''

महामुनि के इस उपदेश को सुनकर हर्ष से युक्त हो राजा शत्रुघ्न ने कहा–

''आपने जैसी आज्ञा दी है, वैसा ही हम लोग करेंगे'' इत्यादि। इसके बाद वे महामना सातों मुनि आकाश में उड़कर विहार कर गये। वे सप्तर्षि निर्वाण क्षेत्रों की वंदना करके अयोध्या में सीता के घर उतरे। अत्यधिक हर्ष को धारण करने वाली एवं श्रद्धा आदि गुणों से सुशोभित सीता ने उन्हें विधिपूर्वक उत्तम आहार दिया। जानकी के नवधाभक्ती से दिये गए सर्वगुणसम्पन्न आहार को ग्रहण कर उसे शुभाशीर्वाद देकर वे मुनि आकाश मार्ग से चले गये।

अनन्तर शत्रुघ्न ने नगर के भीतर और बाहर सर्वत्र जिनेंद्र भगवान की प्रतिमाएँ विराजमान करायीं तथा ईतियों को दूर करने वाली सप्तर्षियों की प्रतिमाएँ भी चारों दिशाओं में विराजमान करायीं। उस समय वहाँ पर सर्व प्रकार से सुभिक्ष, क्षेम और शांति का साम्राज्य हो गया। तब राजा शत्रुघ्न निर्विघ्नरूप से राज्य का संचालन करते हुए और प्रजा का पुत्रवत् पालन करते हुए सुखपूर्वक मथुरा नगरी में रहने लगे।

संकलन

–मुनि विशाल सागर

मूलनायक सहित समुच्चय पूजन

(स्थापना)

तीर्थंकर कल्याणक धारी, तथा देव नव कहे महान्।
देव-शास्त्र--गुरु हैं उपकारी, करने वाले जग कल्याण।।
मुक्ती पाए जहाँ जिनेश्वर, पावन तीर्थ क्षेत्र निर्वाण।
विद्यमान तीर्थंकर आदि, पूज्य हुए जो जगत प्रधान।।
मोक्ष मार्ग दिखलाने वाला, पावन वीतराग विज्ञान।
विशद हृदय के सिंहासन पर, करते भाव सहित आह्वान।।

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक .... सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव-शास्त्र-गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञान! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितौ भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(शम्भू छन्द)

जल पिया अनादी से हमने, पर प्यास बुझा न पाए हैं।
हे नाथ! आपके चरण शरण, अब नीर चढ़ाने लाए हैं।।
जिन तीर्थंकर नवदेव तथा, जिन देव शास्त्र गुरु उपकारी।
शिव सौख्य प्रदायक हैं जग में, हम पूज रहे मंगलकारी।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक.....सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव-शास्त्र-गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल रही कषायों की अग्नि, हम उससे सतत सताए हैं।
अब नील गिरि का चंदन ले, संताप नशाने आए हैं।।
जिन तीर्थंकर नवदेव तथा, जिन देव शास्त्र गुरु उपकारी।
शिव सौख्य प्रदायक हैं जग में, हम पूज रहे मंगलकारी।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक.....सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव-शास्त्र-गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

गुण शाश्वत मम अक्षय अखण्ड, वह गुण प्रगटाने आए हैं।
निज शक्ति प्रकट करने अक्षत, यह आज चढ़ाने लाए हैं।।

जिन तीर्थंकर नवदेव तथा, जिन देव शास्त्र गुरु उपकारी।
शिव सौख्य प्रदायक हैं जग में, हम पूज रहे मंगलकारी।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक.....सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव-शास्त्र-गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्पों से सुरभी पाने का, असफल प्रयास करते आए।
अब निज अनुभूति हेतु प्रभु, यह सुरभित पुष्प यहाँ लाए।।
जिन तीर्थंकर नवदेव तथा, जिन देव शास्त्र गुरु उपकारी।
शिव सौख्य प्रदायक हैं जग में, हम पूज रहे मंगलकारी।।4।।

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक.....सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव-शास्त्र-गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

निज गुण हैं व्यंजन सरस श्रेष्ठ, उनकी हम सुधि बिसराए हैं।
अब क्षुधा रोग हो शांत विशद, नैवेद्य चढ़ाने लाए हैं।।
जिन तीर्थंकर नवदेव तथा, जिन देव शास्त्र गुरु उपकारी।
शिव सौख्य प्रदायक हैं जग में, हम पूज रहे मंगलकारी।।5।।

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक.....सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव-शास्त्र-गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञाता दृष्टा स्वभाव मेरा, हम भूल उसे पछताए हैं।
पर्याय दृष्टि में अटक रहे, न निज स्वरूप प्रगटाए हैं।।
जिन तीर्थंकर नवदेव तथा, जिन देव शास्त्र गुरु उपकारी।
शिव सौख्य प्रदायक हैं जग में, हम पूज रहे मंगलकारी।।6।।

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक.....सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव-शास्त्र-गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

जो गुण सिद्धों ने पाए हैं, उनकी शक्ती हम पाए हैं।
अभिव्यक्ति नहीं कर पाए अतः, भवसागर में भटकाए हैं।।
जिन तीर्थंकर नवदेव तथा, जिन देव शास्त्र गुरु उपकारी।
शिव सौख्य प्रदायक हैं जग में, हम पूज रहे मंगलकारी।।7।।

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक.....सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव-शास्त्र-गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्यो अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल उत्तम से भी उत्तम शुभ, शिवफल हे नाथ ना पाए हैं।
कर्मोंकृत फल शुभ अशुभ मिला, भव सिन्धु में गोते खाए हैं॥
जिन तीर्थंकर नवदेव तथा, जिन देव शास्त्र गुरु उपकारी।
शिव सौख्य प्रदायक हैं जग में, हम पूज रहे मंगलकारी॥8॥

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक.....सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव-शास्त्र-गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

पद है अनर्घ मेरा अनुपम, अब तक यह जान न पाए हैं।
भटकाते भाव विभाव जहाँ, वह भाव बनाते आए हैं॥
जिन तीर्थंकर नवदेव तथा, जिन देव शास्त्र गुरु उपकारी।
शिव सौख्य प्रदायक हैं जग में, हम पूज रहे मंगलकारी॥9॥

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक.....सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव-शास्त्र-गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– प्रासुक करके नीर यह, देने जल की धार।
लाए हैं हम भाव से, मिटे भ्रमण संसार॥

शान्तये शांतिधारा...

दोहा– पुष्पों से पुष्पाञ्जली, करते हैं हम आज।
सुख-शांती सौभाग्यमय, होवे सकल समाज॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्...

पंच कल्याणक के अर्घ्य

तीर्थंकर पद के धनी, पाएँ गर्भ कल्याण।
अर्चा करें जो भाव से पावें निज स्थान॥1॥

ॐ ह्रीं गर्भकल्याणकप्राप्त मूलनायक....सहित सर्व जिनेश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महिमा जन्म कल्याण की, होती अपरम्पार।
पूजा कर सुर नर मुनी, करें आत्म उद्धार॥2॥

ॐ ह्रीं जन्मकल्याणकप्राप्त मूलनायक....सहित सर्व जिनेश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

तप कल्याणक प्राप्त कर, करें साधना घोर।
कर्म काठ को नाशकर, बढ़ें मुक्ति की ओर॥3॥

ॐ ह्रीं तपकल्याणकप्राप्त मूलनायक....सहित सर्व जिनेश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

प्रगटाते निज ध्यान कर, जिनवर केवलज्ञान।
स्व-पर उपकारी बनें, तीर्थंकर भगवान॥4॥

ॐ ह्रीं ज्ञानकल्याणकप्राप्त मूलनायक....सहित सर्व जिनेश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

आठों कर्म विनाश कर, पाते पद निर्वाण।
भव्य जीव इस लोक में, करें विशद गुणगान॥5॥

ॐ ह्रीं मोक्षकल्याणकप्राप्त मूलनायक....सहित सर्व जिनेश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जयमाला

दोहा– तीर्थंकर नव देवता, तीर्थ क्षेत्र निर्वाण।
देव शास्त्र गुरुदेव का, करते हम गुणगान॥

(शम्भू छन्द)

गुण अनन्त हैं तीर्थंकर के, महिमा का कोई पार नहीं।
तीन लोकवर्ति जीवों में, ओर ना मिलते अन्य कहीं॥
विंशति कोड़ा-कोड़ी सागर, कल्प काल का समय कहा।
उत्सर्पण अरु अवसर्पिण यह, कल्पकाल दो रूप रहा॥1॥
रहे विभाजित छह भेदों में, यहाँ कहे जो दोनों काल।
भरतैरावत द्वय क्षेत्रों में, कालचक्र यह चले त्रिकाल॥
चौथे काल में तीर्थंकर जिन, पाते है। पाँचों कल्याण।
चौबिस तीर्थंकर होते हैं, जो पाते हैं पद निर्वाण॥2॥
वृषभनाथ से महावीर तक, वर्तमान के जिन चौबीस।
जिनकी गुण महिमा जग गाए, हम भी चरण झुकाते शीश॥
अन्य क्षेत्र सब रहे अवस्थित, हों विदेह में बीस जिनेश।
एक सौ साठ भी हो सकते हैं, चतुर्थकाल यहाँ होय विशेष॥3॥
अर्हन्तों के यश का गौरव, सारा जग यह गाता है।
सिद्ध शिला पर सिद्ध प्रभु को, अपने उर से ध्याता है॥

आचार्योपाध्याय सर्व साधु हैं, शुभ रत्नत्रय के धारी।
जैनधर्म जिन चैत्य जिनालय, जिन आगम जग उपकारी।।4।।
प्रभु जहाँ कल्याणक पाते, वह भूमि होती पावन।
वस्तु स्वभाव धर्म रत्नत्रय, कहा लोक में मनभावन।।
गुणवानों के गुण चिंतन से, गुण का होता शीघ्र विकाश।
तीन लोक में पुण्य पताका, यश का होता शीघ्र प्रकाश।।5।।
वस्तु तत्त्व जानने वाला, भेद ज्ञान प्रगटाता है।
द्वादश अनुप्रेक्षा का चिन्तन, शुभ वैरागय जगाता है।।
यह संसार असार बताया, इसमें कुछ भी नित्य नहीं।
शाश्वत सुख को जग में खोजा, किन्तु पाया नहीं कहीं।।6।।
पुण्य पाप का खेल निराला, जो सुख-दुःख का दाता है।
और किसी की बात कहें क्या, तन न साथ निभाता है।।
गुप्ति समिति धर्मादि का, पाना अतिशय कठिन रहा।
संवर और निर्जरा करना, जग में दुर्लभ काम कहा।।7।।
सम्यक् श्रद्धा पाना दुर्लभ, दुर्लभ होता सम्यक् ज्ञान।
संयम धारण करना दुर्लभ, दुर्लभ होता करना ध्यान।।
तीर्थंकर पद पाना दुर्लभ, तीन लोक में रहा महान्।
विशद भाव से नाम आपका, करते हैं हम नित गुणगान।।8।।
शरणागत के सखा आप हो, हरने वाले उनके पाप।
जो भी ध्याय भक्ति भाव से, मिट जाए भव का संताप।।
इस जग के दुःख हरने वाले, भक्तों के तुम हो भगवान।
जब तक जीवन रहे हमारा, करते रहें आपका ध्यान।।9।।

दोहा– नेता मुक्ति मार्ग के, तीन लोक के नाथ।
शिवपद पाने नाथ हम, चरण झुकाते माथ।।

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक.....सहित सर्व जिनेश्वर, नवदेवता, देव-शास्त्र-गुरु, सिद्धक्षेत्र, विद्यमान विंशति जिन, वीतराग विज्ञानेभ्यो अनर्घपदप्राप्त्ये जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– हृदय विराजो आन के, मूलनायक भगवान।
मुक्ति पाने के लिए, करते हम गुणगान।।

।। इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।।

सप्त ऋषि समुच्चय पूजा

स्थापना

सुरमन्यु श्री मन्यु निचय अरु, रहे सर्वसुन्दर ऋषिराज।
श्री जयवान विनय लालस मुनि, श्री जय मित्र सप्त मुनिराज।।
ऋद्धि सिद्धि समृद्धी पाने, करते हम ऋषि का गुणगान।
आह्वानन् करते निज उर में, प्राप्त करें हम पद निर्वाण।।

ॐ ह्रीं सर्वोपद्रव-विनाशक चौरारि डाकिनी-शाकिनी-व्यन्तर भूतादि-पराभव-निवारक श्री सप्तऋद्धियुक् सप्त ऋषिराज! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्!

ॐ ह्रीं सर्वोपद्रव-विनाशक चौरारि डाकिनी शाकिनी-व्यन्तर-भूतादि पराभव-निवारक श्री सप्तऋद्धियुक् सप्त ऋषिराज! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं सर्वोपद्रव-विनाशक चौरारि डाकिनी शाकिनी-व्यन्तर-भूतादि पराभव-निवारक श्री सप्तऋद्धियुक् सप्त ऋषिराज! अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

तर्ज–वन्दे जिनवरम्

हम सब मिलकर करें अर्चना, सप्तऋषी गुणवान की।
जिनके द्वारा शिक्षा मिलती, वीतराग विज्ञान की।।
प्रासुक नीर कलश में भरकर, हम पूजा को लाए हैं।
जन्म जरा से मुक्ती पाने, आज शरण में आए हैं।।
भव से मुक्ति दिलाने वाली, पूजा संत महान की।
जिनके द्वारा शिक्षा मिलती, वीतराग विज्ञान की।।1।।
वन्दे ऋषिवरम्-2

ॐ ह्रीं सप्तऋद्धि युक् सप्त मुनये सर्वोपद्रव-विनाशन-हेतवे-चौरारि-डाकिनी शाकिनी-व्यन्तर-भूतादि पराभव-निवारकाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मलयागिरि का सुरभित चन्दन, हमने यहाँ घिसाया है।
भव सन्ताप नशाने का शुभ, भाव हृदय में आया है।।

भव सन्ताप नशाने वाली, अर्चा संत महान की।
जिनके द्वारा शिक्षा मिलती, वीतराग विज्ञान की।।2।।

वन्दे ऋषिवरम्-2

ॐ ह्रीं सप्तऋद्धि युक् सप्त मुनये सर्वोपद्रव-विनाशन-हेतवे-चौरारि-डाकिनी शाकिनी-व्यन्तर-भूतादि पराभव-निवारकाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय पद पाने के हमने, मन में भाव जगाये हैं।
अतः धवल अक्षय ये अक्षत, आज चढ़ाने लाए हैं।।
अक्षत सुपद दिलाने वाली, पूजा संत महान की।
जिनके द्वारा शिक्षा मिलती, वीतराग विज्ञान की।।3।।

वन्दे ऋषिवरम्-2

ॐ ह्रीं सप्तऋद्धि युक् सप्त मुनये सर्वोपद्रव-विनाशन-हेतवे-चौरारि-डाकिनी शाकिनी-व्यन्तर-भूतादि पराभव-निवारकाय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

काम रोग से मारे-मारे, भव सागर में भटक रहे।
कर्मों के बन्धन से चारों, गतियों में हम अटक रहे।।
सप्त ऋषी की पूजा पावन, आतम के उत्थान की।
जिनके द्वारा शिक्षा मिलती, वीतराग विज्ञान की।।4।।

वन्दे ऋषिवरम्-2

ॐ ह्रीं सप्तऋद्धि युक् सप्त मुनये सर्वोपद्रव-विनाशन-हेतवे-चौरारि-डाकिनी शाकिनी-व्यन्तर-भूतादि पराभव-निवारकाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

काल अनादी क्षुधा रोग के, द्वारा बहुत सताए हैं।
व्यंजन सरस चढ़ाकर हम वह, रोग नशाने आए हैं।।
क्षुधा रोग को हरने वाली, पूजा संत महान की।
जिनके द्वारा शिक्षा मिलती, वीतराग विज्ञान की।।5।।

वन्दे ऋषिवरम्-2

ॐ ह्रीं सप्तऋद्धि युक् सप्त मुनये सर्वोपद्रव-विनाशन-हेतवे-चौरारि-डाकिनी शाकिनी-व्यन्तर-भूतादि पराभव-निवारकाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोह महातम में फँसने से, सम्यक् पथ ना पाया है।
सम्यक ज्ञान प्रकाशित करने, दीपक विशद जलाया है।।

खुशबू महके इस जीवन में, अब सम्यक् श्रद्धान की।
जिनके द्वारा शिक्षा मिलती, वीतराग विज्ञान की।।6।।

वन्दे ऋषिवरम्-2

ॐ ह्रीं सप्तऋद्धि युक् सप्त मुनये सर्वोपद्रव-विनाशन-हेतवे-चौरारि-डाकिनी शाकिनी-व्यन्तर-भूतादि पराभव-निवारकाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट कर्म की ज्वाला जलती, जिसमें प्राणी झुलस रहे।
भव्य जीव जिन पूजा करके, मोहजाल में सुलझ रहे।।
धूप से पूजा करने आये, आतम के उत्थान की।
जिनके द्वारा शिक्षा मिलती, वीतराग विज्ञान की।।7।।

वन्दे ऋषिवरम्-2

ॐ ह्रीं सप्तऋद्धि युक् सप्त मुनये सर्वोपद्रव-विनाशन-हेतवे-चौरारि-डाकिनी शाकिनी-व्यन्तर-भूतादि पराभव-निवारकाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

हम ना परम विशुद्ध भावना, अब तक कभी बनाए हैं।
कर्मों के फल पाए हमने, मोक्ष सुफल ना पाए हैं।।
मोक्ष महाफल देने वाली, पूजा संत महान की।
जिनके द्वारा शिक्षा मिलती, वीतराग विज्ञान की।।8।।

वन्दे ऋषिवरम्-2

ॐ ह्रीं सप्तऋद्धि युक् सप्त मुनये सर्वोपद्रव-विनाशन-हेतवे-चौरारि-डाकिनी शाकिनी-व्यन्तर-भूतादि पराभव-निवारकाय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

पद अनर्घ्य की महिमा अनुपम, जिनवाणी में गाया है।
अतःप्राप्त करने को वह पद, हमने लक्ष्य बनाया है।।
अष्ट द्रव्य से पूजा ऋषि की, आत्म के कल्याण की।
जिनके द्वारा शिक्षा मिलती, वीतराग विज्ञान की।।9।।

वन्दे ऋषिवरम्-2

ॐ ह्रीं सप्तऋद्धि युक् सप्त मुनये सर्वोपद्रव-विनाशन-हेतवे-चौरारि-डाकिनी शाकिनी-व्यन्तर-भूतादि पराभव-निवारकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– प्रासुक निर्मल नीर से, देते हैं त्रय धार।
जीवन सुखमय शांत हो, होवे धर्म प्रचार।
।।शान्तये शान्तिधारा।।

परम सुगन्धित पुष्प यह, लेकर अपरम्पार।
पुष्पाञ्जलि करते विशद, पाने भव से पार॥
।।पुष्पाञ्जलि क्षिपेत।।

अर्घावली

दोहा– सप्त ऋषी को पूजाकर, चरणों करूँ प्रणाम।
पुष्पाञ्जलि करके विशद, पाऊँ मुक्तीधाम॥
(इति मण्डलस्योपरि पुष्पाञ्जलि क्षिपेत)

''श्री सुरमन्यु ऋषि पूजा-1''

स्थापना

सुरमन्यु ऋषिराज की महिमा, को सारा जग गाता है।
तीन योग से चरण कमल में, सादर शीश झुकाता है॥
ऋद्धि सिद्धि समृद्धी पाने, करते हम ऋषि का गुणगान।
आह्वानन करते हैं उर में, प्राप्त करें हम पद निर्वाण॥

ॐ ह्रीं सर्वोपद्रव-चौरारि-मारि-रोग-डाकिनी-शकिनी-कुशवन्हि भगंदराद्युद्भवाल्प- मृत्यु-विनाशक-सुरमन्यु ऋषिराज। अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननम्।

ॐ ह्रीं सर्वोपद्रव-चौरारि-मारि-रोग-डाकिनी-शकिनी-कुशवन्हि भगंदराद्युद्भवाल्प- मृत्यु-विनाशक-सुरमन्यु ऋषिराज। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्

ॐ ह्रीं सर्वोपद्रव-चौरारि-मारि-रोग-डाकिनी-शकिनी-कुशवन्हि भगंदराद्युद्भवाल्प-मृत्यु-विनाशक-सुरमन्यु ऋषिराज। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(शम्भू छन्द)

हमने सदियों से जल पीकर, इस तन की प्यास बुझाई है।
किन्तू चेतन की प्यास कभी, न शांत पूर्ण हो पाई है॥

अब जन्म-मृत्यु का रोग नशे, हम निर्मल नीर चढ़ाते हैं।
हम सुरमन्यू मुनि के पद पंकज, सादर शीश झुकाते हैं।।1॥
ॐ ह्रीं सुरमन्यवे सप्तऋद्धि संप्राप्ताय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

शीतल चंदन के लेपन से, यह तन शीतल हो जाता है।
किन्तू शीतलता यह चेतन, न जरा प्राप्त कर पाता है॥
अब भव सन्ताप नशाने को, यह चन्दन श्रेष्ठ चढ़ाते हैं।
हम सुरमन्यू मुनि के पद पंकज, सादर शीश झुकाते हैं।।2॥
ॐ ह्रीं सुरमन्यवे सप्तऋद्धि संप्राप्ताय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

हम चतुर्गती भटकाए हैं, अक्षय निधि न मिल पाई है।
है अक्षय मेरा धाम श्रेष्ठ, न उसकी सुधि भी आई है॥
अब अक्षय धाम प्राप्त करने, यह अक्षत श्रेष्ठ चढ़ाते हैं।
हम सुरमन्यू मुनि के पद पंकज, सादर शीश झुकाते हैं।।3॥
ॐ ह्रीं सुरमन्यवे सप्तऋद्धि संप्राप्ताय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

बहु काम व्यथा से पीड़ित हो, भव के भोगों में लीन रहे॥
भव के भोगों को पाने में, हमने अनगिनते कष्ट सहे॥
अब काम व्यथा के नाश हेतु, सुरभित पुष्प चढ़ाते हैं।
हम सुरमन्यू मुनि के पद पंकज, सादर शीश झुकाते हैं।।4॥
ॐ ह्रीं सुरमन्यवे सप्तऋद्धि संप्राप्ताय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

व्यंजन खाकर के हमने कई, इस तन को पुष्ट बनाया है।
न भोग किया निज चेतन का, न योग शुद्ध हो पाया है॥
अब क्षुधा रोग हो पूर्ण नाश, नैवेद्य चढ़ाने लाए हैं।
हम सुरमन्यू मुनि के पद पंकज, सादर शीश झुकाते हैं।।5॥
ॐ ह्रीं सुरमन्यवे सप्तऋद्धि संप्राप्ताय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हमने मोहित हो सदियों से, सारे जग को अपनाया है।
अज्ञान तिमिर में भ्रमित हुए, न ज्ञान दीप जल पाया है॥
अब मोह महातम नाश हेतु, यह मणिमय दीप जलाते हैं।
हम सुरमन्यू मुनि के पद पंकज, सादर शीश झुकाते हैं।।6॥
ॐ ह्रीं सुरमन्यवे सप्तऋद्धि संप्राप्ताय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों का बंध पड़ा भारी, जो बन्धन डाले रहते हैं।
यह जीवन रहे तब तक जग में, घन घातकर्म का सहते हैं।।
अब अष्ट कर्म के नाश हेतु यह, सुरभित धूप जलाते हैं।
हम सुरमन्यू मुनि के पद पंकज, सादर शीश झुकाते हैं।।7।।

ॐ ह्रीं सुरमन्यवे सप्तऋद्धि संप्राप्ताय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल की आशा में भ्रमण किया, न क्षेत्र कोई अविशेष रहा।
फल पाया हमने नाशवान, फिर पछताना ही शेष रहा।।
अब मोक्ष महाफल पाने को, फल ताजे सरस चढ़ाते हैं।
हम सुरमन्यू मुनि के पद पंकज, सादर शीश झुकाते हैं।।8।।

ॐ ह्रीं सुरमन्यवे सप्तऋद्धि संप्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

हो मूल्यवान कोई वस्तू, हमने इस जग की पाई है।
न प्राप्त हुई शायद कोई, फिर भी शक्ती अजमाई है।।
अब पद अनर्घ पाने हेतू, यह पावन अर्घ्य चढ़ाते है।
हम सुरमन्यू मुनि के पद पंकज, सादर शीश झुकाते हैं।।9।।

ॐ ह्रीं सुरमन्यवे सप्तऋद्धि संप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोरठा– लेकर निर्मल नीर, शांती धारा दे रहे।
रहे हृदय में धीर, मोक्ष मार्ग पर हम बढ़ें।।
।।शान्तये शान्तिधारा।।

सोरठा– शुभ भावों के साथ, पुष्पाञ्जलि अर्पण करें।
चरण झुकाते माथ, सुरमन्यू मुनिराज पद।।
(दिव्य पुष्पाञ्जलि क्षिपेत्)

(पूर्णार्घ्य)

चरण कमल सुरमन्यू ऋषि के, पूज रहे उर भक्ती धार।
अष्ट द्रव्य का पूर्ण अर्घ्य ले, चढ़ा रहे पद में शुभकार।।
आज मिला पूजा का अवसर, किया भाव से लघु गुणगान।
चरण वन्दना करते हैं ऋषि, पाएँ हम भी पद निर्वाण।।

ॐ ह्रीं श्री सुरमन्यु-ऋषीवराय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– ऋद्धि सिद्धि द्वारा विशद, पाकर शक्ति अपार।
रत्नत्रय निधि प्राप्तकर, पाएँ मोक्ष का द्वार।।
।।इत्याशीर्वादः दिव्य पुष्पाञ्जलि क्षिपेत्।।

श्री मन्यु ऋषि पूजा-2

स्थापना

श्री मन्यु मुनिराज के चरणों, में करते शत-शत वन्दन।
भक्ती भाव से भव्य जीव सब, करते हैं जिन का अर्चन।।
ऋद्धि सिद्धि समृद्धी पाने, करते हम ऋषि का गुणगान।
आह्वानन् करते निज उर में, प्राप्त करें हम पद निर्वाण।।

ॐ ह्रीं सर्वोपद्रव-चौरारि-मारि-रोग-डाकिनी शकिनी-कुशवन्हि-भगंदरादि उद्भव अल्पमृत्यु विनाशक विपुल-विमल-युक् श्रीमन्यु ऋषिराज! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आव्हाननम्।

ॐ ह्रीं सर्वोपद्रव-चौरारि-मारि-रोग-डाकिनी शकिनी-कुशवन्हि-भगंदरादि उद्भव अल्पमृत्यु विनाशक विपुल-विमल-युक् श्रीमन्यु ऋषिराज! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापननम्।

ॐ ह्रीं सर्वोपद्रव-चौरारि-मारि-रोग-डाकिनी शकिनी-कुशवन्हि-भगंदरादि उद्भव अल्पमृत्यु विनाशक विपुल-विमल-युक् श्रीमन्यु ऋषिराज! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

निर्मल वचन न निर्मल मन है, निर्मल न मन काया है।
आतम स्वच्छ नहीं हो पाई, पाप कर्म की माया है।।
यह निर्मल प्रासुक जल अनुपम, आत्म शुद्धि को लाए हैं।
श्री मन्यू ऋषि के चरणों की, अर्चा करने हम आए हैं।।1।।

ॐ ह्रीं विपुल-विमल युक् श्री मन्यवे जलं निर्वपामीति स्वाहा।

बचपन क्रीड़ा में गुजर गया, विषयों में गई जवानी है।
भौंरा सम भ्रमण किया जग में, आगम की सीख न मानी हैं।।
अब चन्दन घिसकर के सुरभित, हम आत्म शुद्धि को लाए हैं।
श्री मन्यू ऋषि के चरणों की, अर्चा करने हम आए हैं।।2।।

ॐ ह्रीं विपुल-विमल युक् श्री मन्यवे चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

पद के मद ने मदहोश किया, माया ने मन को ललचाया।
चिन्ता ने चिता बना डाला, न अक्षय पद हमने पाया।।
अक्षय यह श्रेष्ठ धवल अतिशय, हम आत्म शुद्धि को लाए हैं।
श्री मन्यू ऋषि के चरणों की, अर्चा करने हम आए हैं।।3।।

ॐ ह्रीं विपुल-विमल युक् श्री मन्यवे अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

सौन्दर्य लुभाता जीवों को, मन काम वासना में भटके।
विषयों की आशा में फँसकर, कर्मों के फँदे में लटके।।
यह पुष्प श्रेष्ठ अनुपम सुरभित, हम आत्म शुद्धि को लाए हैं।
श्री मन्यू ऋषि के चरणों की, अर्चा करने हम आए हैं।।4।।

ॐ ह्रीं विपुल-विमल युक् श्री मन्यवे पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

रसना रस की लोलुपता में, मन को व्याकुल कर देती है।
जब क्षुधा सताती प्राणी को, बुद्धी उसकी हर लेती है।।
यह सरस शुद्ध व्यंजन घृत के, हम आत्म शुद्धि को लाए हैं।
श्री मन्यू ऋषि के चरणों की, अर्चा करने हम आए हैं।।5।।

ॐ ह्रीं विपुल-विमल युक् श्री मन्यवे नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छाया है मोह का अंधियारा, उसमें अनादि से भरमाया।
बाहर में दीप जलाए कई, ना ज्ञान का दीपक प्रजलाया।।
यह दीप जलाकर रत्नमयी, हम आत्म शुद्धि को लाए हैं।
श्री मन्यू ऋषि के चरणों की, अर्चा करने हम आए हैं।।6।।

ॐ ह्रीं विपुल-विमल युक् श्री मन्यवे दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों से नाता जोड़ा है, कर्मों ने हमको उलझाया।
हम फँसे भँवर में कर्मों के, निष्कर्म भाव न मन भाया।।
यह धूप दशांगी अग्नी में, हम खेने हेतू लाए हैं।
श्री मन्यू ऋषि के चरणों की, अर्चा करने-हम आए हैं।।7।।

ॐ ह्रीं विपुल-विमल युक् श्री मन्यवे धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

ताजे फल मन को तृप्त करें, मुक्ती फल की क्या बात अहा।
जो सिद्धी तुमने पाई है, वह पाना मेरा लक्ष्य रहा।।

श्री फल आदिक कई ताजे फल, हम यहाँ सिद्धि को लाए हैं।
श्री मन्यू ऋषि के चरणों की, अर्चा करने हम आए हैं।।8।।

ॐ ह्रीं विपुल-विमल युक् श्री मन्यवे फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जग वैभव को अपना कहकर, जीवन यह जग में उलझाया।
जब कर्म उदय में आता तो, न साथ कोई देने आया।
यह अर्घ्य बनाया शुभ अनुपम, हम यहाँ चढ़ाने लाए हैं।
श्री मन्यू ऋषि के चरणों की, अर्चा करने हम आए हैं।।9।।

ॐ ह्रीं विपुल-विमल युक् श्री मन्यवे अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोरठा

धारा देते आज, शांती पाने के लिए।
हे मन्यु ऋषिराज, ऋद्धि सिद्धि अब दो मुझे।।
(शान्तये शान्तिधारा)

भाव भक्ती के साथ, पुष्पाञ्जलि करते यहाँ।
पाने शिव का राज, पूजा करते भाव से।।
(पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

पूर्णार्घ्य

चरण कमल श्री मन्यू ऋषि के, पूज रहे उर भक्तीधार।
अष्ट द्रव्य का पूर्ण अर्घ्य ले, चढ़ा रहे पद में शुभकार।।
आज मिला पूजा का अवशर, किया भाव से लघु गुणगान।
चरण वन्दना करते हे ऋषि, पाएँ हम भी पद निर्वाण।।

ॐ ह्रीं सर्वोपद्रव-चौरारि-मारि-रोग-डाकिनी शकिनी-कुशवन्हि-भगंदराद्युद्भव अल्पमृत्यु-विनाशनाय विपुल-विमल-युक् श्री मन्यवे पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

औरों की पीड़ा हरें, ऋद्धीधार ऋषीश।
हरो रोग जन्मादि के, चरण झुकाएँ शीश।।
(इत्याशीर्वाद : पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

श्री निचय ऋषि पूजा-3

स्थापना

ऋषिवर निचय पूज्य इस जग में, जिनकी पूजा करते जीव।
श्रद्धा भक्ती से गुण गाकर, प्राप्त करें जो पुण्य अतीव॥
ऋद्धि सिद्धि समृद्धी पाने, करते हम ऋषि का गुणगान।
आह्वानन् करते निज उर में, प्राप्त करें हम पद निर्वाण॥

ॐ ह्रीं नष्ट विनोद्रावित-सर्वोपद्रव-कुष्ठादि-पिशाचादि-विघ्न विनाशक श्री निचय ऋषि। अत्र अवतर अवतर सवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं नष्ट विनोद्रावित-सर्वोपद्रव-कुष्ठादि-पिशाचादि-विघ्न विनाशक श्री निचय ऋषि। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं नष्ट विनोद्रावित-सर्वोपद्रव-कुष्ठादि-पिशाचादि-विघ्न विनाशक श्री निचय ऋषि। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

तर्ज–माता तू दया करके...

हम पर में भटकाए, निज को ना जाना है।
त्रय रोग नशाने को, यह नीर चढ़ाना है॥
हम भाव सहित ऋषि की, अर्चा को आए हैं।
अब शिव पदवी पाएँ, यह भाव बनाए हैं॥1॥

ॐ ह्रीं विघ्न विनाशनाय श्री निचय मुनये जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन की शीतलता, बहु सौख्य दिलाती है।
तव वाणी हे ऋषिवर, भव ताप नशाती हैं॥
हम भाव सहित ऋषि की, अर्चा को आए हैं।
अब शिव पदवी पाएँ, यह भाव बनाए हैं॥2॥

ॐ ह्रीं विघ्न विनाशनाय श्री निचय मुनये चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षण भंगुर जग सारा, हम नहीं जान पाए।
अब अक्षय पद पाने, ऋषिराज! शरण आये॥

हम भाव सहित ऋषि की, अर्चा को आए हैं।
अब शिव पदवी पाएँ, यह भाव बनाए हैं॥3॥

ॐ ह्रीं विघ्न विनाशनाय श्री निचय मुनये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

हम काम बाण नाशी, यह पुष्प चढ़ाते हैं।
शरणागत बनकर के, हम शीश झुकाते हैं॥
हम भाव सहित ऋषि की, अर्चा को आए हैं।
अब शिव पदवी पाएँ, यह भाव बनाए हैं॥4॥

ॐ ह्रीं विघ्न विनाशनाय श्री निचय मुनये पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

तृष्णा का क्षय करके, प्रभु समरस पा जाएँ।
चउ संज्ञा क्षय करके, आतम का रस पाएँ॥
हम भाव सहित ऋषि की, अर्चा को आए हैं।
अब शिव पदवी पाएँ, यह भाव बनाए हैं॥5॥

ॐ ह्रीं विघ्न विनाशनाय श्री निचय मुनये नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अज्ञान नशे मेरा, निज आतम दीप जले।
जो मोह तिमिर छाया, अब मेरा पूर्ण गले॥
हम भाव सहित ऋषि की, अर्चा को आए हैं।
अब शिव पदवी पाएँ, यह भाव बनाए हैं॥6॥

ॐ ह्रीं विघ्न विनाशनाय श्री निचय मुनये दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों की शक्ती से, हम हारे है स्वामी।
वह नाशो अब मेरे, हे जिन! अन्तर्यामी॥
हम भाव सहित ऋषि की, अर्चा को आए हैं।
अब शिव पदवी पाएँ, यह भाव बनाए हैं॥7॥

ॐ ह्रीं विघ्न विनाशनाय श्री निचय मुनये धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ फल से राग किया, हमने बहु दुख पाए।
फल चढ़ा रहे स्वामी, शिव फल पाने आए॥
हम भाव सहित ऋषि की, अर्चा को आए हैं।
अब शिव पदवी पाएँ, यह भाव बनाए हैं॥8॥

ॐ ह्रीं विघ्न विनाशनाय श्री निचय मुनये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

हम शिव पद पाने को, यह अर्घ्य चढ़ाते हैं।
तुम हो प्रभु अविकारी, हम महिमा गाते हैं।।
हम भाव सहित ऋषि की, अर्चा को आए हैं।
अब शिव पदवी पाएँ, यह भाव बनाए हैं।।9।।

ॐ ह्रीं विघ्न विनाशनाय श्री निचय मुनये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

शांतीधारा हम यहाँ, देते चरण समीप।
निचय ऋषी मेरे हृदय, जले ज्ञान का दीप।।

।।शान्तये शान्तिधारा।।

पुष्पाञ्जलि को पुष्प यह, लाये हम ऋषिराज।
जब तक मुक्ती ना मिले, करें आपका जाप।।

।।दिव्य पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।।

(पूर्णार्घ्य)

चरण कमल ऋषिराज निचय के, पूज रहे उर भक्तीधार।
अष्ट द्रव्य का पूर्ण अर्घ्य ले, चढ़ा रहे पद में शुभकार।।
आज मिला पूजा का अवशर, किया भाव से लघु गुणगान।
चरण वन्दना करते हे ऋषि, पाएँ हम भी पद निर्वाण।।

ॐ ह्रीं नष्ट विनोद्रावित-सर्वोपद्रव-कुष्ठादि-पिशाचादि-विघ्न विनाशनाय श्री निचय मुनये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

निचय ऋषी की हम यहाँ, अर्चा करें सहर्ष।
वीतराग जिन संत के, करके पद स्पर्श।।

(इत्याशीर्वाद : पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

श्री सर्व सुंदर ऋषि पूजा-4

स्थापना

नाम सर्व सुन्दर है जिनका, ऋद्धी धारी जैन ऋषीश।
जिनकी अर्चा करें भाव से, चरण झुकाएँ सुर नर शीश।।
ऋद्धि सिद्धि समृद्धी पाने, करते हम ऋषि का गुणगान।
आह्वानन् करते निज उर में, प्राप्त करें हम पद निर्वाण।।

ॐ ह्रीं सर्वागोछमलादि सर्वोपद्रव-विनाशक श्री सर्वसुन्दर ऋषिराज। अत्र अवतर अवतर संवौषट् आव्हाननम्।

ॐ ह्रीं सर्वागोछमलादि सर्वोपद्रव-विनाशक श्री सर्वसुन्दर ऋषिराज। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं सर्वागोछमलादि सर्वोपद्रव-विनाशक श्री सर्वसुन्दर ऋषिराज। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

कर्मकलंक पंक मल धोने, निर्मल जल भर लाए हैं।
जन्म जरा मृतु रोग नशाने, गुरु चरणों में आये हैं।।
ऋषिवर श्री सर्वसुन्दर पद, पूजा करते महति महान।
मन वच तन धर तीन योग से, भाव सहित करते गुणगान।।1।।

ॐ ह्रीं ऋद्धीधर श्री सर्वसुन्दर मुनये जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चमक-दमक मय महक मनोहर, मंगल चंदन लाये हैं।
पाप शाप संताप मिटाने, गुरु गुण गाने आए हैं।।
ऋषिवर श्री सर्वसुन्दर पद, पूजा करते महति महान।
मन वच तन धर तीन योग से, भाव सहित करते गुणगान।।2।।

ॐ ह्रीं ऋद्धीधर श्री सर्वसुन्दर मुनये चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय अक्षत अनुपम सुन्दर, अंजलि भरकर लाए हैं।
अक्षय पद हो प्राप्त हमे गुरु, चरण शरण में आए हैं।।
ऋषिवर श्री सर्वसुन्दर पद, पूजा करते महति महान।
मन वच तन धर तीन योग से, भाव सहित करते गुणगान।।3।।

ॐ ह्रीं ऋद्धीधर श्री सर्वसुन्दर मुनये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

चंदन से रंजित अक्षत हम, फूल मानकर लाये हैं।
काम वासना नाश करो गुरु, पद में सुमन चढ़ाये हैं।।
ऋषिवर श्री सर्वसुन्दर पद, पूजा करते महति महान।
मन वच तन धर तीन योग से, भाव सहित करते गुणगान।।4।।

ॐ ह्रीं ऋद्धीधर श्री सर्वसुन्दर मुनये पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम धवल श्री फल द्वारा, नैवेद्य बनाकर लाए हैं।
क्षुधा वेदना शान्त करो गुरु, तव चरणों को ध्याये हैं।।
ऋषिवर श्री सर्वसुन्दर पद, पूजा करते महति महान।
मन वच तन धर तीन योग से, भाव सहित करते गुणगान।।5।।

ॐ ह्रीं ऋद्धीधर श्री सर्वसुन्दर मुनये नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्न जड़ित शुभ दीप सुमंगल, आरती करने लाये हैं।
निशा नाश हो मोह तिमिर की, तुम सा बनने आये हैं।।
ऋषिवर श्री सर्वसुन्दर पद, पूजा करते महति महान।
मन वच तन धर तीन योग से, भाव सहित करते गुणगान।।6।।

ॐ ह्रीं ऋद्धीधर श्री सर्वसुन्दर मुनये दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

महकें दशों दिशायें जिससे, धूप दशांगी लाए हैं।
अष्ट कर्म का दमन करो गुरु, कर्म शमन को आए हैं।।
ऋषिवर श्री सर्वसुन्दर पद, पूजा करते महति महान।
मन वच तन धर तीन योग से, भाव सहित करते गुणगान।।7।।

ॐ ह्रीं ऋद्धीधर श्री सर्वसुन्दर मुनये धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

ऐला केला आम सुपाड़ी, लोंग श्रीफल लाए हैं।
मोक्ष महाफल पाने को शुभ, भाव बनाकर आए हैं।।
ऋषिवर श्री सर्वसुन्दर पद, पूजा करते महति महान।
मन वच तन धर तीन योग से, भाव सहित करते गुणगान।।8।।

ॐ ह्रीं ऋद्धीधर श्री सर्वसुन्दर मुनये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल फलादि वसु द्रव्य सुसन्दर, थाल सजाकर लाए हैं।
पद अनर्घ पाने हे गुरुवर!, अर्घ्य चढ़ाने लाए हैं।।

ऋषिवर श्री सर्वसुन्दर पद, पूजा करते महति महान।
मन वच तन धर तीन योग से, भाव सहित करते गुणगान।।9।।

ॐ ह्रीं ऋद्धीधर श्री सर्वसुन्दर मुनये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोरठा

क्षीर समान सुनीर, भरकर लाए श्रेष्ठ यह।
नाशें भव की पीर, धारा देते तीन हम।।

।।शान्तये शान्तिधारा।।

सोरठा

ताजे विविध प्रकार, फूले-फूले फूल यह।
आगम के अनुसार, पुष्पाञ्जलि करते यहाँ।

।।पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।।

पूर्णार्घ्य

सर्वसुन्दर ऋषि के चरणाम्बुज, पूज रहे उर भक्तीधार।
अष्टद्रव्य का पूर्ण अर्घ्य ले, चढ़ा रहे पद में शुभकार।।
आज मिला पूजा का अवशर, किया भाव से लघु गुणगान।
चरण वन्दना करते हे ऋषि, पाएँ हम भी पद निर्वाण।।

ॐ ह्रीं सर्वगोछमलादि सर्वोपद्रव विनाशक श्री सर्वसुन्दर मुनये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोरठा

सर्व सुन्दर ऋषिराज की, पूजा करते खास।
अर्चा कर मुक्ती मिले, है हमको विश्वास।।

(दिव्य पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

श्री जयवान ऋषि पूजा-5

स्थापना

परम दिगम्बर मुद्राधारी, जिनका नाम रहा जयवान।
मन वच तन को जय करने हम, करें आपका गुरु गुणगान॥
ऋद्धि सिद्धि समृद्धी पाने, करते हम ऋषि का गुणगान।
आह्वानन करते निज उर में, प्राप्त करें हम पद निर्वाण॥

ॐ ह्रीं विषोपद्रव-निवारक सर्व-शांति प्रदायक श्री जयवान ऋषिराज।
अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं विषोपद्रव-निवारक सर्व-शांति प्रदायक श्री जयवान ऋषिराज।
अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं विषोपद्रव-निवारक सर्व-शांति प्रदायक श्री जयवान ऋषिराज।
अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(ज्ञानोदय छन्द)

विष सम विषयों का फल है प्रभु, वह सदियों से हम भोग रहे।
फल पुण्य पाप के हैं सुख दुख, जो मिले सदा संयोग रहे॥
अब जन्म जरा की पीड़ा से, छुटकारा हमको मिल जाए॥
जयवान ऋषी तव चरणों में, हम पूजा करने को आए॥1॥

ॐ ह्रीं श्री जयवान मुनये जलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल रही कषायों की अग्नी, हे ऋषि उसमें हम झुलस रहें।
संताप हृदय में छाया है, कर्मोदय से कई कष्ट सहे॥
ऋषिराज आपकी भक्ती से, यह जीवन पावन हो जाए।
जयवान ऋषी तव चरणों में, हम पूजा करने को आए॥2॥

ॐ ह्रीं श्री जयवान मुनये चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

यह बोझ पाप का बाँधा सिर, जिसके कारण हम अकुलाए।
मोती सम उज्ज्वल अक्षत यह, प्रभु यहाँ चढ़ाने हम लाए।

ऋषिराज आपकी भक्ती से, यह जीवन पावन हो जाए।
जयवान ऋषी तव चरणों में, हम पूजा करने को आए॥3॥

ॐ ह्रीं श्री जयवान मुनये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

है विषय भोग का रोग भयंकर, जिसका ना उपचार मिला।
हे शीलेश्वर! तव चरणों में, यह पुष्प-चढ़ा उपमान खिला॥
ऋषिराज आपकी भक्ती से, यह जीवन पावन हो जाए।
जयवान ऋषी तव चरणों में, हम पूजा करने को आए॥4॥

ॐ ह्रीं श्री जयवान मुनये पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

है बड़ी लालसा खाने की, मन जिह्वा स्वाद में रमण करे।
निज आत्म ज्ञान को भूल रहा, जो राग रंग में भ्रमण करे।
ऋषिराज आपकी भक्ती से, यह जीवन पावन हो जाए।
जयवान ऋषी तव चरणों में, हम पूजा करने को आए॥5॥

ॐ ह्रीं श्री जयवान मुनये नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दिखता है जो भी आंखों से, उसको ही रोशनी मान रहे।
जो है प्रकाश निज अन्तर में, उससे हरदम अन्जान रहे॥
ऋषिराज आपकी भक्ती से, यह जीवन पावन हो जाए।
जयवान ऋषी तव चरणों में, हम पूजा करने को आए॥6॥

ॐ ह्रीं श्री जयवान मुनये दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

पुरुषार्थ किया हमने असफल, कर्मों से ना मुक्ती पाई।
तब दर्शन करने नाथ आज, मुझको भी निज की सुधआई॥
ऋषिराज आपकी भक्ती से, यह जीवन पावन हो जाए।
जयवान ऋषी तव चरणों में, हम पूजा करने को आए॥7॥

ॐ ह्रीं श्री जयवान मुनये धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

दुष्कर्मों ने हमको लूटा, सद्धर्म कर्म सब विसराए।
हम रत्नत्रय के सुरतरु से, मुक्ती के फल ना चुन पाए॥
ऋषिराज आपकी भक्ती से, यह जीवन पावन हो जाए।
जयवान ऋषी तव चरणों में, हम पूजा करने को आए॥8॥

ॐ ह्रीं श्री जयवान मुनये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ अशुभ भाव के शोलों से, हे नाथ! सदा जलते आये।
पद है अनर्घ मेरा शाश्वत, उसको हम जान नहीं पाए॥
ऋषिराज आपकी भक्ती से, यह जीवन पावन हो जाए।
जयवान ऋषी तव चरणों में, हम पूजा करने को आए॥9॥

ॐ ह्रीं श्री जयवान मुनये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

भक्ती मेरी हे गुरू, कर लो अब स्वीकार।
शिव पद पाने के लिए, खड़े आपके द्वार॥

।। शान्तये शान्तिधारा।।

बन्धन काटो कर्म के, ऋषिवर श्री जयवान।
पुष्पाञ्जलि करते यहाँ, पाने पद निर्वाण॥

।।दिव्य पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।।

पूर्णार्घ्य

चरण कमल जयवान ऋषी के, पूज रहे उर भक्तीधार।
अष्टद्रव्य का पूर्ण अर्घ्य ले, चढ़ा रहे पद में शुभकार॥
आज मिला पूजा का अवशर, किया भाव से लघु गुणगान।
चरण वन्दना करते हे ऋषि, पाएँ हम भी पद निर्वाण॥

ॐ ह्रीं विष उपद्रव निवारक सर्व शांति प्रदायक श्री जयवान मुनये पूर्णार्घ्यं निर्वमामीति स्वाहा।

दोहा

करते हैं हम वन्दना, जयवान ऋषि की आन।
अष्ट द्रव्य से पूजते, 'विशद' करें गुणगान॥

(इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

श्री विनय लालस ऋषि पूजा-6

स्थापना

कहे विनय लालस ऋषिवर जी, विनय आदि गुण के सागर।
सम्यक् दर्शन ज्ञान चरण के, कहे गये जो रत्नाकर॥
ऋद्धि सिद्धि समृद्धी पाने, करते हम ऋषि का गुणगान।
आह्वानन् करते निज उर में, प्राप्त करें हम पद निर्वाण॥

ॐ ह्रीं मित्रर्द्धि-कृत्स्न-उपद्रव-तोषक-कृत्स्न उपद्रव-निवारक श्री विनयलालस ऋषिराज। अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं मित्रर्द्धि-कृत्स्न-उपद्रव-तोषक-कृत्स्न उपद्रव-निवारक श्री विनयलालस ऋषिराज। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं मित्रर्द्धि-कृत्स्न-उपद्रव-तोषक-कृत्स्न उपद्रव-निवारक श्री विनयलालस ऋषिराज। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(चोबोला छन्द)

काल अनादी से कर्मों के, बन्धन कर बहु दुःख सहे।
राग-द्वेष की परिणति पाके, त्रय लोकों में भटक रहे॥
जन्म-जरा के नाश हेतु, यह निर्मल नीर चढ़ाते हैं।
विनय लालस ऋषिवर के पद में, सादर शीश झुकाते हैं॥1॥

ॐ ह्रीं ऋद्धिधर श्री विनय लालसाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

भव भोगों की रही कामना, जिससे जग में भ्रमण किया।
भव संताप मिटाने को ना, हमने अब तक यतन किया॥
नाश होय संसार ताप मम्, चन्दन श्रेष्ठ चढ़ाते हैं।
विनय लालस ऋषिवर के पद में, सादर शीश झुकाते हैं॥2॥

ॐ ह्रीं ऋद्धिधर श्री विनय लालसाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

विषय कषायों में रत रहकर, निजपद को न पाया है।
क्षण भंगुर जीवन पाकर के, तीनों लोक भ्रमाया है॥

अक्षय पद पाने को अभिनव, अक्षत चरण चढ़ाते हैं।
विनय लालस ऋषिवर के पद में, सादर शीश झुकाते हैं।।3।।

ॐ ह्रीं ऋद्धिधर श्री विनय लालसाय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

मोह महामद को पीकर के, जीवन व्यर्थ गँवाए हैं।
कामवाण से विना हुए हम, अब तक चेत न पाए है।।
कामवासना नाश हेतु यह, पुष्पित पुष्प चढ़ाते हैं।
विनय लालस ऋषिवर के पद में, सादर शीश झुकाते हैं।।4।।

ॐ ह्रीं ऋद्धिधर श्री विनय लालसाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

(शम्भू छंद)

हम विषय भोग की ज्वाला में, सदियों से जलते आए हैं।
आशाएँ पूर्ण न हो पाईं, हमने कई जन्म गवाएँ हैं।।
अब क्षुधा रोग के नाश हेतु, अतिशय नैवेद्य चढ़ाते हैं।
श्री विनय लालस ऋषिवर के पद में, सादर शीश झुकाते हैं।।5।।

ॐ ह्रीं ऋद्धिधर श्री विनय लालसाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है घोर तिमिर मिथ्या जग में, जिससे जग जीव भ्रमाए हैं।
अतिशय प्रकाश का पुँज जीव, हम अब तक समझ न पाए हैं।।
अब मोह तिमिर के नाश हेतु, यह मनहर दीप जलाते हैं।
श्री विनय लालस ऋषिवर के पद में, सादर शीश झुकाते हैं।।6।।

ॐ ह्रीं ऋद्धिधर श्री विनय लालसाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञानावरणादिक कर्मों ने, जग में ये जाल बिछाया है।
हम फँसे अनादी से उसमें, छुटकारा न मिल पाया है।।
अब अष्ट कर्म के नाश हेतु, अग्नी में धूप जलाते हैं।
श्री विनय लालस ऋषिवर के पद में, सादर शीश झुकाते हैं।।7।।

ॐ ह्रीं ऋद्धिधर श्री विनय लालसाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

हम पुण्य पाप का फल पाकर, उसमें ही रमते आए हैं।
हम भटक रहे हैं निज पद से, न अक्षय फल को पाए हैं।

अब मोक्ष महाफल पाने को, चरणों फल सरस चढ़ाते है।
श्री विनय लालस ऋषिवर के पद में, सादर शीश झुकाते हैं।।8।।

ॐ ह्रीं ऋद्धिधर श्री विनय लालसाय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

शाश्वत हैं जीव अनादी से, हम यह सब जान न पाए हैं।
तन में चेतन का भाव जगा, उसको अपनाते आए हैं।।
अब पद अनर्घ पाने हेतू, अतिशय यह अर्घ्य चढ़ाते हैं।
श्री विनय लालस ऋषिवर के पद में, सादर शीश झुकाते हैं।।9।।

ॐ ह्रीं ऋद्धिधर श्री विनय लालसाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

शांतीधारा के लिए, लाए प्रासुक नीर।
नश जाए मेरी लगी, जन्म जरा की पीर।।

।।शान्तये शान्तिधारा।।

पुष्पाञ्जलि करके विशद, पूजा करें त्रिकाल।
संयम का पालन करें, वे हों मालामाल।।

।।पुष्पाजंलि क्षिपेत।।

पूर्णार्घ्य

चरण वन्दना करते हैं ऋषि, पाएँ हम भी पद निर्वाण।।
अष्ट द्रव्य का पूर्ण अर्घ्य ले, चढ़ा रहे पद में शुभकार।।
आज मिला पूजा का अवशर, किया भाव से लघु गुणगान
चरण वन्दना करते हैं ऋषि, पाए हम भी पद निर्वाण।।

ॐ ह्रीं मित्रर्द्धि कृत्स्न उपद्रव तोषक-कृत्सन उपद्रव निवारक श्री विनय लालसाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

विनय लालस ऋषिराज का, जपें निरन्तर नाम
भक्ती भाव से चरण में, करते विशद प्रणाम

(इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

श्री जयमित्र ऋषि पूजा-7

स्थापना

ऋषिवर श्री जयमित्र कहाए, भवि जीवों के करुणाकार।
मोक्ष मार्ग के राही गुरुवर, भवि जीवों के तारणहार॥
ऋद्धि सिद्धि समृद्धी पाने, करते हम ऋषि का गुणगान।
आह्वानन् करते निज उर में, प्राप्त करें हम पद निर्वाण॥

ॐ ह्रीं अक्षय युग्मत्यादि सर्वोपद्रव-नाशन तत्पर श्री जयमित्र ऋषिराज!
अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं अक्षय युग्मत्यादि सर्वोपद्रव-नाशन तत्पर श्री जयमित्र ऋषिराज!
अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं अक्षय युग्मत्यादि सर्वोपद्रव-नाशन तत्पर श्री जयमित्र ऋषिराज!
अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

जल पिया अनादी से हमने, पर-तृषा शान्त ना हो पाई।
अति लगा हुआ है मिथ्यामल, हमने आतम न चमकाई॥
अब जन्म जरा हो नाश मेरा, हम नीर चढ़ाने लाए है।
जयमित्र ऋषी के चरणों में, हर्षित हो शीश झुकाएँ हैं॥1॥

ॐ ह्रीं श्री जयमित्र मुने जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन के वन घिस गए कई, पर शीतलता न मिल पाई।
सद् दर्शन की शुभ कली हृदय, में नहीं हमारे खिल पाई॥
चन्दन घिसकर मलयागिरि का, हम आज चढ़ाने आए हैं।
जयमित्र ऋषी के चरणों में, हर्षित हो शीश झुकाएँ हैं।2॥

ॐ ह्रीं श्री जयमित्र मुने चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

भर-भर कर थाल तन्दुलों के, कई खाकर बहुत नशाए हैं।
अक्षय पद जो है अखण्ड, वह प्राप्त नहीं कर पाए हैं॥
अब अक्षय पद के हेतु यहाँ, यह अक्षय अक्षत लाए हैं।
जयमित्र ऋषी के चरणों में, हर्षित हो शीश झुकाएँ हैं॥3॥

ॐ ह्रीं श्री जयमित्र मुने अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

तृष्णा की खाई है असीम, वह पूर्ण नहीं हो पाती है।
है काम वासना दुखदायी, भव-भव में हमे सताती है॥
हम काम वासना नाश हेतु, यह पुष्प सुगंधित लाए हैं।
जयमित्र ऋषी के चरणों में, हर्षित हो शीश झुकाएँ हैं॥4॥

ॐ ह्रीं श्री जयमित्र मुने पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

यह क्षुधा वेदना जीवों को, सदियों से छलती आई है।
खाकर मिष्ठान अनादी से, न तृप्ति हमे मिल पाई है।
अब क्षुधा वेदना नाश हेतु, नैवेद्य चढ़ाने लाए है।
जयमित्र ऋषी के चरणों में, हर्षित हो शीश झुकाएँ हैं॥5॥

ॐ ह्रीं श्री जयमित्र मुने नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जड़ दीप तिमिर का नाशक है, मिथ्यातम को न हरण करे।
चैतन्य प्रकाशित करता वह, रत्नत्रय को जो ग्रहण करे॥
अब विशद ज्ञान का दीप जले, हम दीप जलाकर लाए हैं।
जयमित्र ऋषी के चरणों में, हर्षित हो शीश झुकाएँ हैं॥6॥

ॐ ह्रीं श्री जयमित्र मुने दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अग्नी में धूप जलाने से, आकाश सुवासित होता है।
जब तीव्र कर्म का वेग बढ़े, चेतन शक्ती तब खोता है॥
अब कर्म शमन के हेतु यहाँ, यह धूप जलाने लाए हैं।
जयमित्र ऋषी के चरणों में, हर्षित हो शीश झुकाएँ हैं॥7॥

ॐ ह्रीं श्री जयमित्र मुने धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

यह सरस मधुर फल खाने से, रसना की चाह बढ़ाते हैं।
हम चाह दाह के नाश हेतु, यह फल तव चरण चढ़ाते हैं॥
हो मोक्ष महाफल प्राप्त हमें, तव हर्ष-हर्ष गुण गाए हैं।
जयमित्र ऋषी के चरणों में, हर्षित हो शीश झुकाएँ हैं॥8॥

ॐ ह्रीं श्री जयमित्र मुने फलं निर्वपामीति स्वाहा।

हमने अनर्घ पद पाने का, सदियों से भाव बनाया है।
किन्तू विषयों में फँसने से, वह पद हमने न पाया है॥

अब पद अनर्घ के हेतु प्रभो!, यह अर्घ्य चढ़ाने लाए हैं।
जयमित्र ऋषी के चरणों में, हर्षित हो शीश झुकाएँ हैं।।9।।

ॐ ह्रीं श्री जयमित्र मुने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– शिवपुर वासी हम बनें, पाएँ सुख भरपूर।
शांतीधारा दे रहे, नाश कर्म हों क्रूर।।

।।शान्तये शान्तिधारा।।

जब तक रवि शशि लोक में, स्थिर है गिरिराज।
तब तक इस संसार में, पूज्य रहें मुनिराज।।

।।पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।।

पूर्णार्घ्य

चरण कमल जयमित्र ऋषी के, पूज रहे उर भक्तीधार।।
अष्ट द्रव्य का पूर्ण अर्घ्य ले, चढ़ा रहे पद में शुभकार।।
आज मिला पूजा का अवशर, किया भाव से लघु गुणगान
चरण वन्दना करते हैं ऋषि, पाएँ हम भी पद निर्वाण।।

ॐ ह्रीं अक्षय युग्मत्यादि सर्वोपद्रव नाशन-तत्पर जयमित्र मुनये-पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– जयमित्र ऋषी के चरण में, विशद भाव के साथ।
अर्घ्य चढ़ा अर्चा करें, झुका रहे हैं माथ।।

(इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलि क्षिपेत)

समुच्चय जाप्य– ॐ ह्रीं सर्वोपद्रव-विनाशक-श्री सुरमन्यु-श्री मन्यु-श्री निचय-सर्वसुंदर-जयवान-विनयलालस-जयमित्रेभ्यो नमः मम (अमुकस्य) सर्वशांतिं कुरू कुरू स्वाहा।

समुच्चय जयमाला

दोहा– सप्त ऋषि के चरण की, पूजा है अभिराम।
जयमाला गाते विशद, करके चरण प्रणाम।।

(जोगीरासा छन्द)

ऋषिवर सुरमन्यु की महिमा, जग के प्राणी गाएँ।
श्री मन्यू के चरणों आके, सुर नर अर्घ्य चढ़ाएँ।।
श्री निचय जी अष्ट ऋद्धियाँ, तपधर के प्रगटाएँ।
सर्व सुन्दर के चरण कमल में, सुरनर शीश झुकाएँ।।1।।
श्री जयवान विजय श्री पाके, अपने कर्म नशाते।
विनय लालस के पद वन्दन को, दूर दूर से आते।।
श्री जयमित्र मित्र जन-जन के, जग में करुणाकारी।
सप्त ऋषी के चरण कमल में, सविनय ढोक हमारी।।2।।
नन्दन नृप के पुत्र सभी यह, सप्त ऋषी कहलाए।
धरणी माता रही आपकी, जिनके भाग्य जगाए।।
मुनिसुव्रत का शासन था तब, राम चन्द्र के भाई।
मधु का राज्य जीत शत्रुघन, पाए बहु प्रभुताई।।3।।
आकर के चमरेन्द्र यक्ष ने, महामारी फैलाई।
मथुरा नगरी में विनाश की, मानो ही घड़ि आई।।
पुण्योदय से सप्त ऋषी तब, गगन मार्ग से आये।
भव्य जीव ऋषियों की पूजा, करके हर्ष मनाए।।4।।
महामारी की कृपा से जिनकी, हुई थी पूर्ण सफाई।
प्रबल पुण्य का योग जगा तब, फिर से शुभ छड़ि पाई।
सीता ने ऋद्धीधर ऋषियों, को आहार कराया।
जिनकी पूजा करने का यह, 'विशद' सुअवसर पाया।।5।।

दोहा– करते हैं हम वन्दना, चरणों हे ऋषिराज।
कर्म शृंखला नाशकर, पाएँ शिवपुर राज।।

ॐ ह्रीं सप्तऋद्धि युक् सप्त मुनये सर्वोपद्रव-विनाशन हेतवे-चौरारि डाकिनी-शाकिनी- व्यंतर-भूतादि-पराभव-निवारकाय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

पूजा का फल प्राप्त कर, पाएँ शिव सोपान।
सुख शांती सौभाग्य हो, करते हम गुणगान

(इत्याशीर्वाद : पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

आरती सप्तऋषि की

तर्ज - इह विधि मंगल आरती कीजे.....

सप्त ऋषी की आरति कीजे, अपना जन्म सफल कर लीजे॥ टेक॥

सुरमन्यू पहले ऋषि गाए, संयम धर के ऋद्धी पाए।सप्तऋषि..।

मन्यू ऋषि द्वितीय कहलाए, मुक्ति पथ को जो अपनाए।सप्तऋषि..।

निचय ऋषीश्वर तृतिय जानो, रत्नत्रय के धारी मानो।सप्तऋषि..।

सर्व सुन्दर ऋषि चौथे सोहे, भव्यों के मन को जो मोहे।सप्तऋषि..।

पञ्चम ऋषि जयवान कहाए, जो अपनी महिमा दिखलाए।सप्तऋषि..।

छठवे ऋषि विनय लालस भाई, जिनने पाई जग प्रभुताई।सप्तऋषि..।

सप्तम जय मित्र कहाए स्वामी, विशद मोक्ष पथ के पथगामी।सप्तऋषि..।

सप्त ऋषियों की हम आरति गाते, पद में सादर शीश झुकातें।

प्रशस्ति

ॐ नमः सिद्धेभ्यः श्री मूलसंघे कुन्दकुन्दाम्नाये बलात्कार गणे सेन गच्छे नन्दी संघस्य परम्परायां श्री आदि सागराचार्य जातास्तत् शिष्यः श्री महावीर कीर्ति आचार्य जातास्तत् शिष्याः श्री विमलसागराचार्या जातास्तत शिष्य श्री भरत सागराचार्य श्री विराग सागराचार्या जातास्तत् शिष्य आचार्य विशदसागराचार्य जम्बूद्वीपे भरत क्षेत्रे आर्य- खण्डे भारतदेशे हरियाणा प्रान्ते श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र, रानीला मध्ये अद्य वीर निर्वाण सम्वत् 2540 वि.सं. 2070 चैत्र मासे कृष्ण पक्षे अष्टमी दिन सोमवासरे सत्यऋषि मण्डल विधान रचना समाप्ति इति शुभं भूयात्।

प. पू. 108 आचार्य श्री विशदसागरजी महाराज की पूजन

(स्थापना)

पुण्य उदय से हे! गुरुवर, दर्शन तेरे मिल पाते हैं।
श्री गुरुवर के दर्शन करके, हृदय कमल खिल जाते हैं॥
गुरु आराध्य हम आराधक, करते हैं उर से अभिवादन।
मम् हृदय कमल से आ तिष्ठो, गुरु करते हैं हम आह्वानन्॥

ॐ ह्रूँ 108 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् इति आह्वानन् अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

सांसारिक भोगों में फँसकर, ये जीवन वृथा गंवाया है।
रागद्वेष की वैतरणी से, अब तक पार न पाया है॥
विशद सिंधु के श्री चरणों में, निर्मल जल हम लाए हैं।
भव तापों का नाश करो, भव बंध काटने आये हैं॥

ॐ ह्रूँ 108 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रोध रूप अग्नि से अब तक, कष्ट बहुत ही पाये हैं।
कष्टों से छुटकारा पाने, गुरु चरणों में आये हैं॥
विशद सिंधु के श्री चरणों में, चंदन घिसकर लाये हैं।
संसार ताप का नाश करो, भव बंध नशाने आये हैं॥

ॐ ह्रूँ 108 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय संसार ताप विध्वंशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

चारों गतियों में अनादि से, बार-बार भटकाये हैं।
अक्षय निधि को भूल रहे थे, उसको पाने आये हैं॥
विशद सिंधु के श्री चरणों में, अक्षय अक्षत लाये हैं।
अक्षय पद हो प्राप्त हमें, हम गुरु चरणों में आये हैं॥

ॐ ह्रूँ 108 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय अक्षय पद प्राप्ताय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

काम बाण की महावेदना, सबको बहुत सताती है।
तृष्णा जितनी शांत करें वह, उतनी बढ़ती जाती है॥
विशद सिंधु के श्री चरणों में, पुष्प सुगंधित लाये हैं।
काम बाण विध्वंश होय गुरु, पुष्प चढ़ाने आये हैं॥

ॐ ह्रूँ 108 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय कामबाण पुष्पं निर्व. स्वा.।

काल अनादि से हे गुरुवर! क्षुधा से बहुत सताये हैं।
खाये बहु मिष्ठान जरा भी, तृप्त नहीं हो पाये हैं॥
विशद सिंधु के श्री चरणों में, नैवेद्य सुसुन्दर लाये हैं।
क्षुधा शांत कर दो गुरु भव की! क्षुधा मेटने आये हैं॥

ॐ ह्रूँ 108 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय क्षुधा रोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोह तिमिर में फंसकर हमने, निज स्वरूप न पहिचाना।
विषय कषायों में रत रहकर, अंत रहा बस पछताना॥
विशद सिंधु के श्री चरणों में, दीप जलाकर लाये हैं।
मोह अंध का नाश करो, मम् दीप जलाने आये हैं॥

ॐ ह्रूँ 108 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय मोहान्धकार विध्वंशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अशुभ कर्म ने घेरा हमको, अब तक ऐसा माना था।
पाप कर्म तज पुण्य कर्म को, चाह रहा अपनाना था॥
विशद सिंधु के श्री चरणों में, धूप जलाने आये हैं।
आठों कर्म नशाने हेतू, गुरु चरणों में आये हैं॥

ॐ ह्रूँ 108 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय अष्टकर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

पिस्ता अरु बादाम सुपाड़ी, इत्यादि फल लाये हैं।
पूजन का फल प्राप्त हमें हो, तुमसा बनने आये हैं॥
विशद सिंधु के श्री चरणों में, भाँति-भाँति फल लाये हैं।
मुक्ति वधु की इच्छा करके, गुरु चरणों में आये हैं॥

ॐ ह्रूँ 108 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय मोक्ष फल प्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रासुक अष्ट द्रव्य हे गुरुवर! थाल सजाकर लाये हैं।
महाव्रतों को धारण कर लें, मन में भाव बनाये हैं॥
विशद सिंधु के श्री चरणों में, अर्घ समर्पित करते हैं।
पद अनर्घ हो प्राप्त हमें गुरु, चरणों में सिर धरते हैं॥

ॐ ह्रूँ 108 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय अनर्घ पद प्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा– **विशद सिंधु गुरुवर मेरे, वंदन करूँ त्रिकाल।**
मन-वन-तन से गुरु की, करते हैं जयमाला॥

गुरुवर के गुण गाने को, अर्पित है जीवन के क्षण-क्षण।
श्रद्धा सुमन समर्पित हैं, हर्षायें धरती के कण-कण॥
छतरपुर के कुपी नगर में, गूँज उठी शहनाई थी।
श्री नाथूराम के घर में अनुपम, बजने लगी बधाई थी॥
बचपन में चंचल बालक के, शुभादर्श यूँ उमड़ पड़े॥
ब्रह्मचर्य व्रत पाने हेतु, अपने घर से निकल पड़े॥
आठ फरवरी सन् छियानवे को, गुरुवर से संयम पाया।
मोक्ष ज्ञान अन्तर में जागा, मन मयूर अति हर्षाया॥
पद आचार्य प्रतिष्ठा का शुभ, दो हजार सन् पाँच रहा।
तेरह फरवरी बंसत पंचमी, बने गुरु आचार्य अहा॥
तुम हो कुंद-कुंद के कुन्दन, सारा जग कुन्दन करते।
निकल पड़े बस इसलिए, भवि जीवों की जड़ता हरते॥
मंद मधुर मुस्कान तुम्हारे, चेहरे पर बिखरी रहती।
तव वाणी अनुपम न्यारी है, करुणा की शुभ धारा बहती है॥
तुममें कोई मोहक मंत्र भरा, या कोई जादू टोना है।
है वेश दिगम्बर मनमोहक अरु, अतिशय रूप सलौना है॥
हैं शब्द नहीं गुण गाने को, गाना भी मेरा अन्जाना।
हम पूजन स्तुति क्या जाने, बस गुरु भक्ती में रम जाना॥
गुरु तुम्हें छोड़ न जाएँ कहीं, मन में ये फिर-फिरकर आता।
हम रहें चरण की शरण यहीं, मिल जाये इस जग की साता॥
सुख साता को पाकर समता से, सारी ममता का त्याग करें।
श्री देव-शास्त्र-गुरु के चरणों में, मन-वच-तन अनुराग करें॥
गुरु गुण गाएँ गुण को पाने, औ सर्वदोष का नाश करें।
हम विशद ज्ञान को प्राप्त करें, औ सिद्ध शिला पर वास करें॥

ॐ ह्रूँ 108 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्व. स्वा.

दोहा– **गुरु की महिमा अगम है, कौन करे गुणगान।**
मंद बुद्धि के बाल हम, कैसे करें बखान॥

(इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

प.पू. साहित्य रत्नाकर आचार्य श्री 108 विशदसागर जी महाराज द्वारा रचित पूजन महामंडल विधान साहित्य सूची

1. श्री आदिनाथ महामण्डल विधान
2. श्री अजितनाथ महामण्डल विधान
3. श्री संभवनाथ महामण्डल विधान
4. श्री अभिनन्दननाथ महामण्डल विधान
5. श्री सुमतिनाथ महामण्डल विधान
6. श्री पद्मप्रभ महामण्डल विधान
7. श्री सुपार्श्वनाथ महामण्डल विधान
8. श्री चन्द्रप्रभू महामण्डल विधान
9. श्री पुष्पदंत महामण्डल विधान
10. श्री शीतलनाथ महामण्डल विधान
11. श्री श्रेयांसनाथ महामण्डल विधान
12. श्री वासुपूज्य महामण्डल विधान
13. श्री विमलनाथ महामण्डल विधान
14. श्री अनन्तनाथ महामण्डल विधान
15. श्री धर्मनाथ जी महामण्डल विधान
16. श्री शांतिनाथ महामण्डल विधान
17. श्री कुंथुनाथ महामण्डल विधान
18. श्री अरहनाथ महामण्डल विधान
19. श्री मल्लिनाथ महामण्डल विधान
20. श्री मुनिसुव्रतनाथ महामण्डल विधान
21. श्री नमिनाथ महामण्डल विधान
22. श्री नेमिनाथ महामण्डल विधान
23. श्री पार्श्वनाथ महामण्डल विधान
24. श्री महावीर महामण्डल विधान
25. श्री पंचपरमेष्ठी विधान
26. श्री णमोकार मंत्र महामण्डल विधान
27. श्री सर्वसिद्धीप्रदायक श्री भक्तामर महामण्डल विधान
28. श्री सम्मेद शिखर विधान
29. श्री श्रुत स्कंध विधान
30. श्री यागमण्डल विधान
31. श्री जिनबिम्ब पंचकल्याणक विधान
32. श्री त्रिकालवर्ती तीर्थंकर विधान
33. श्री कल्याणकारी कल्याण मंदिर विधान
34. लघु समवशरण विधान
35. सर्वदोष प्रायश्चित विधान
36. लघु पंचमेरू विधान
37. लघु नंदीश्वर महामण्डल विधान
38. श्री चंवलेश्वर पार्श्वनाथ विधान
39. श्री जिनगुण सम्पतिविधान
40. एकीभाव स्तोत्र विधान
41. श्री ऋषि मण्डल विधान
42. श्री विषापहार स्तोत्र महामण्डल विधान
43. श्री भक्तामर महामण्डल विधान
44. वास्तु महामण्डल विधान
45. लघु नवग्रह शांति महामण्डल विधान
46. सूर्य अरिष्टनिवारक श्री पद्मप्रभ विधान
47. श्री चौंसठ ऋद्धि महामण्डल विधान
48. श्री कर्मदहन महामण्डल विधान
49. श्री चौबीस तीर्थंकर महामण्डल विधान
50. श्री नवदेवता महामण्डल विधान
51. वृहद ऋषि महामण्डल विधान
52. श्री नवग्रह शांति महामण्डल विधान
53. कर्मजयी श्री पंच बालयति विधान
54. श्री तत्वार्थसूत्र महामण्डल विधान
55. श्री सहस्त्रनाम महामण्डल विधान
56. वृहद नंदीश्वर महामण्डल विधान
57. महामृत्युंजय महामण्डल विधान
59. श्री दशलक्षण धर्म विधान
60. श्री रत्नत्रय आराधना विधान
61. श्री सिद्धचक्र महामण्डल विधान
62. अभिनव वृहद कल्पतरू विधान
63. वृहद श्री समवशरण मण्डल विधान
64. श्री चारित्र लब्धि महामण्डल विधान
65. श्री अनन्तव्रत महामण्डल विधान
66. कालसर्पयोग निवारक मण्डल विधान
67. श्री आचार्य परमेष्ठी महामण्डल विधान
68. श्री सम्मेद शिखर कूटपूजन विधान
69. त्रिविधान संग्रह–1
70. त्रि विधान संग्रह
71. पंच विधान संग्रह
72. श्री इन्द्रध्वज महामण्डल विधान
73. लघु धर्म चक्र विधान
74. अर्हत महिमा विधान
75. सरस्वती विधान
76. विशद महाअर्चना विधान
77. विधान संग्रह (प्रथम)
78. विधान संग्रह (द्वितीय)
79. कल्याण मंदिर विधान (बड़ा गांव)
80. श्री अहिच्छत्र पार्श्वनाथ विधान
81. विदेह क्षेत्र महामण्डल विधान
82. अर्हत नाम विधान
83. सम्यक् अराधना विधान
84. श्री सिद्ध परमेष्ठी विधान
85. लघु नवदेवता विधान
86. लघु मृत्युँजय विधान
87. शान्ति प्रदायक शान्तिनाथ विधान
88. मृत्युञ्जय विधान
89. लघु जम्बू द्वीप विधान
90. चारित्र शुद्धिव्रत विधान
91. क्षायिक नवलब्धि विधान
92. लघु स्वयंभू स्तोत्र विधान
93. श्री गोम्मटेश बाहुबली विधान
94. वृहद निर्वाण क्षेत्र विधान
95. एक सौ सत्तर तीर्थंकर विधान
96. तीन लोक विधान
97. कल्पद्रुम विधान
98. श्री चौबीसी निर्वाण क्षेत्र विधान
99. श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर विधान
100. श्री सहस्त्रनाम विधान (लघु)
101. श्री त्रैलोक्य मण्डल विधान (लघु)
102. श्री तत्वार्थ सूत्र विधान (लघु)
103. पुण्यास्त्रव विधान
104. सप्तऋषि विधान
105. तेरहद्वीप विधान
106. श्री शान्ति,कुन्थु, अरहनाथ मण्डल विधान
107. श्रावकव्रत दोष प्रायश्चित विधान
108. तीर्थंकर पंचकल्याणक तीर्थ विधान
109. सम्यक् दर्शन विधान
110. श्रुतज्ञान व्रत विधान
111. ज्ञान पच्चीसी व्रत विधान
112. तीर्थंकर पंचकल्याणक तिथि विधान
113. विजय श्री विधान
114. चारित्र शुद्धि विधान
115. श्री आदिनाथ पंचकल्याणक विधान
116. श्री आदिनाथ विधान (रानीला)
117. श्री शांतिनाथ विधान (सामोद)
118. दिव्यध्वनि विधान
119. षट्खण्डागम विधान
120. श्री पार्श्वनाथ पंचकल्याणक विधान
121. विशद पञ्चागम संग्रह
122. जिन गुरु भक्ती संग्रह
123. धर्म की दस लहरें
124. स्तुति स्तोत्र संग्रह
125. विराग वंदन
126. बिन खिले मुरझा गए
127. जिंदगी क्या है
128. धर्म प्रवाह
129. भक्ती के फूल
130. विशद श्रमण चर्या
131. रत्नकरण्ड श्रावकाचार चौपाई
132. इष्टोपदेश चौपाई
133. द्रव्य संग्रह चौपाई
134. लघु द्रव्य संग्रह चौपाई
135. समाधितन्त्र चौपाई
136. शुभषितरत्नावली
137. संस्कार विज्ञान
138. बाल विज्ञान भाग–3
139. नैतिक शिक्षा भाग–1, 2, 3
140. विशद स्तोत्र संग्रह
141. भगवती आराधना
142. चिंतवन सरोवर भाग–1
143. चिंतवन सरोवर भाग–2
144. जीवन की मन:स्थितियाँ
145. आराध्य अर्चना
146. आराधना के सुमन
147. मूक उपदेश भाग–1
148. मूक उपदेश भाग–2
149. विशद प्रवचन पर्व
150. विशद ज्ञान ज्योति
151. जरा सोचो तो
152. विशद भक्ती पीयूष
153. विजोलिया तीर्थपूजन आरती चालीसा संग्रह
154. विराटनगर तीर्थपूजन आरती चालीसा संग्रह

नोट : उपरोक्त 120 विधानों में से अधिकाधिक विधान कर अथाह पुण्याभव करें।